# Chapter - 2

# :: द्वितीय अध्याय ::

## :: विषय-वस्तु एवं चरित्र-सृष्टि की दृष्टि से शिवानीजी के उपन्यासों की भाषा ::

## :: द्वितीय अध्याय ::

## :: विषय-वस्तु एवं चरित्र-सृष्टि की दृष्टि से शिवानी के उपन्यासों की भाषा ::

**2.00 प्रास्ताविक :**

प्रथम अध्याय में उपन्यास तथा भाषा के पारस्परिक संबंधों को लेकर कुछ सर्व-सामान्य सी बातों पर प्रकाश डाला गया है। अब यहां प्रस्तुत अध्याय में विषय-वस्तु एवं चरित्र-सृष्टि से सम्बद्ध कतिपय आयामों को लेकर शिवानी के उपन्यासों की भाषा पर विचार करने का उपक्रम है। विषय-वस्तु कई प्रकार का हो सकता है -- सामाजिक, सम-सामयिक, निकट अतीत से सम्बद्ध, अतीत से सम्बद्ध - ऐतिहासिक, पौरा-णिक, मनोवैज्ञानिक, व्यंग्यात्मक और कहना न होगा कि विषय-वस्तु के अनुरूप भाषा का प्रयोग उपन्यास के यथार्थाग्रह की माँग है। यद्यपि शिवानी के उपन्यासों में ऐतिहासिक-पौराणिक उपन्यास नहीं मिलते हैं, तथापि निकट अतीत के सन्दर्भ तथा कभी-कभी ऐतिहासिक एवं पौराणिक सन्दर्भ भी प्रसंगानुरूप उपलब्ध होते हैं, वहां शिवानी की भाषा का क्या रूप होता है, उसका प्रतिपादन करने का यत्न यहां हुआ है।

विषय-वस्तु ही पात्रों का निर्माण करता है और इस चरित्र-सृष्टि में भाषा की जो महती भूमिका है, उसका निर्देश पूर्ववर्ती पृष्ठों में किया जा चुका है। पात्र के निर्माण में उसका बाहरी आपा (बाह्य-व्यक्तित्व), भीतरी आपा (आंतरिक व्यक्तित्व), उसका परिवेश, शिक्षा-संस्कार, लिंग आदि कई आयामों को ध्यान में रखना पड़ता है। अतः उनको घाट देते समय भाषा की मिट्टी ही काम में आती है। यहां यह विश्लेषित करने का प्रयत्न हुआ है कि चरित्र-सृष्टि में यथेष्ट भाषा-प्रयोग में शिवानीजी किस हद तक सफल हुई हैं।

## 2.01 : विषय-वस्तु एवं भाषा का संबंध :

विषय-वस्तु एवं भाषा का बहुत निकट का संबंध है। जैसा विषय-वस्तु होगा, भाषा भी उसके अनुरूप होगी। विषय-वस्तु यदि कोई नृत्यांगना से सम्बद्ध है, तो भाषा में उससे संलग्नित शब्दावली अपने-आप चली आयेगी। उसी प्रकार विषय-वस्तु यदि अस्पताल व डाक्टरों से जुड़ा हुआ हो तो भाषा में भी उससे सम्बद्ध शब्दों का आगमन होगा। शिवानी के उपन्यास "कृष्णकली" का प्रारंभिक अंश सामंतकालीन नृत्यांगनाओं के वस्तु से संयुक्त है। उसकी पन्ना एक ऊंचे दरजे की नृत्यांगना है, अतः भाषा भी वस्तु के उस वातावरण को लेकर आयी है — "इसीसे उसके प्रेमियों को सर्वदा एक लम्बे क्यू में खड़े रहना पड़ता। एक लाल वेल्वेट में बंधी डायरी में, उसके सेक्रेटरी दुलाल बाबू सबके एपाइण्टमेण्ट की तिथि दर्ज करते जाते। केवल एक ही ग्राहक के लिए इस डायरी में लिखी तिथि का कोई महत्व नहीं था। कुमिल्ला के प्रख्यात ज़मींदार विद्युतरंजन मजूमदार, जब चाहें तब पन्ना की पूर्व-निर्धारित तिथियों में उलट-फेर करा सकते थे। पन्ना का उनसे प्रथम परिचय राजभवन के एक जलसे में हुआ था। पन्ना के सुमधुर कण्ठ, अपूर्व सौन्दर्य और बंकिम कटाक्षों की चर्चा उन दिनों सम्पूर्ण बंगाल में फैल चुकी थी। सम्भ्रान्त, कुलीन ब्राह्म-गृहों में भी, ब्राह्मोत्सव में उसे विशेष सम्मान सहित आमन्त्रित किया जाता। ..."औ

अनाथेर नाथ , ओ अगतिरे गति / ओ अकूलेर कूल ओ पतितेर पति " ... माघोत्सव में भावविभोर होकर पन्ना ने गाया , तो सुननेवालों की आँखों में आंसू छलक आये थे , क्या गुरुदेव ने यह पंक्ति उसीके लिए लिखी थी ? यह उस पतिता के कण्ठ का जादू था या पंक्तियों का ? "[1]

उसी प्रकार शिवानीजी के एक अन्य उपन्यास "भैरवी" में एक अघोरी साधु की तंत्र-साधना और उसके अखाड़े के वस्तु को लिया गया है। शिवशंकर स्वामीनाथन वैसे तो एक पढ़ा-लिखा युवक था , परंतु कौल-साधना में पड़कर एक तांत्रिक बन जाता है। यहां उस उपन्यास से एक उदाहरण प्रस्तुत है -- " तंत्र-मंत्र , कुंडलिनी शक्ति , षट्चक्र , इंगला-पिंगला , सुषुम्ना , सहज-समाधि , प्रत्याहार प्राणायाम , सब कुछ तो उसके सहजिया सिद्ध उसे जाने-अनजाने पढ़ाने लगे थे। ... गुरु की यही इच्छा थी भैरवी , जो कभी उनकी साधना-मार्ग की पुष्पलता थी , वही बन गई कंटकों की बेल — उखाड़कर दूर फेंक दिया — ठीक ही किया। जय गुरु , जय गुरु। ... गुरु ने ही मुझे इसी धूनी के पास प्रबोध चन्द्रोदय की कहानी सुनाई थी भैरवी। माया दी ने कहा था , उससे पूछना — " मेरे कौलाचार्य , अन्ततः तुमने नई भैरवी को ही क्या पार्वती बनाया ? ...." उन्हें तुम कापालिक गुरु भैरवानंद मत बनने देना भैरवी — तुम भाग जाना , दूर चली जाना , बहुत दूर।" "[2] यहां पर जो शब्दावली प्रयुक्त हुई है उसका संबंध तंत्र-मार्ग , सहजयान-वज्रयान आदि सम्प्रदायों से है।

शिवानीजी के उपन्यास "चौदह फेरे" का कर्नल अपनी स्वरूपवती पत्नी नंदी की उपेक्षा कर मल्लिका नामक एक अल्ट्रा-मॉडर्न मोडर्न युवती से प्रेम करता है। मल्लिका नंदी से अधिक सुंदर नहीं है , बल्कि सौन्दर्य के भारतीय मानदण्डों से देखा जाय तो नंदी सौन्दर्य में मल्लिका से इक्कीस ही पड़ती है , परंतु बाहरी ताम-झाम और स्मार्टनेस के लिहाज से मल्लिका बाजी मार ले जाती है। उपन्यास के इस कथावस्तु के परिप्रेक्ष्य में उसकी भाषा का एक उदाहरण यहां प्रस्तुत है — " पुरुष को क्या केवल नारी का सौन्दर्य ही बांधता है ? कभी सुंदरी पत्नी पति को वश में

नहीं कर पाती और कभी काली-कलूटी चुड़ैल-सी बदशकल स्त्री भी सुंदर पुरुष को अपने काले चरणों का दास बनाकर छोड़ देती है । इकहरे बदन की मल्लिका के चेहरे में, सिवाय दो बड़ी-बड़ी धनुष-सी खिंची आंखों के और कुछ भी नहीं था, किन्तु उन्हीं दो रसीली आंखों ने उसके मादक यौवन की बागडोर सम्हाल ली थी । उस चंचल-मुखरा रमणी के कटाक्षों में, हंसी में, आचरण में कहीं भी संयम का अंकुश नहीं था । बार-बार कुशलता से वह झीने आंचल को अपने उन्नत उरोजों के उभार से जानबूझकर गिरा-गिरा देती और तृषित चातकी की दृष्टि से कर्नल को ही अपनी मुग्ध चावनी में बांधकर, गर्व से नन्दी की ओर देखकर, मूक चुनौती दे डालती, नन्दी के पति ने कभी उसे ऐसी आंखों से नहीं देखा था । वह मल्लिका की ओर देखता तो आंखों में लाड़ छलक उठता । " [3]

"श्मशानचम्पा" उपन्यास में श्रीधर नामक एक पुराने रईस और रसिक-प्रकृति के व्यक्ति का चित्रण हुआ है । उस जमाने के रईसों में रखैल रखने का फैशन था । उपन्यास की नायिका चम्पा की रुक्की बुआ के ससुर श्रीधर भी ऐसे ही शौकीनों में आते थे । लेखिका ने इस प्रसंग का जो चित्रण किया है, उसमें वह युग और उसकी परंपरा बोलती-सी प्रतीत होती है । यथा — " रुक्की के श्वसुर रसिक प्रकृति के जीव थे, किन्तु उन दिनों तो कुमाऊं में रेडलाइट एरिया की मिस्ट्रेस रखना किसी भी समृद्ध व्यक्ति की समृद्धि का प्रतीक था । उसके कर्म-कांडी श्वसुर की मिस्ट्रेस थीं, कुमाऊं की अपूर्व नृत्यांगना, राधारानी । रामगढ़ ~~[illegible]~~ के प्रसिद्ध नैकग्राम से ही वह अद्वितीया स्वर-लय-नटिनी अपनी मां के साथ अल्मोड़ा की उस कुख्यात तंग गली में रहने चली आई थी । रुक्की के श्वसुर ने ही अपनी उस नवीन प्रेयसी का नाम धरा था रामकटोरी । कभी भी उनके गृह में कोई तीज-त्योहार, विवाह-मुंडन होता, तो डोली में किसी कुलवधू की ही गरिमा से मंडिता रामकटोरी अवश्य पधारती । चेहरे से भी बड़ी नथ का कुंद-निया लटकन संभालती वह आंगन से उतरती, तो चन्द्रानन पर एंचाली के चिकनिया पिछौड़े का घूंघट तना रहता, विवाहिता सौत दासी

की विनम्रता से हाथ बांधे खड़ी हो जाती । एक दिन रुक्की के श्वसुर श्रीधर भारतेन्दु की मल्लिका की तस्वीर से उसकी लैसलगी कुरती का नमूना लेकर अल्मोड़ा के प्रख्यात टेलर-मास्टर गुसाईं के पास पहुंचे । जैसे भी हो , ठीक उसी नमूने की एक कुरती उनकी प्राणप्रिया मल्लिका के लिए भी सिलनी होगी । बांहों में झालरों की मोहक चुन्नटों के बीच पतली-पतली प्लीटें , बीच-बीच में फ्रेंच लेस की महीन तुरपन और कमर में इलास्टिक का ऐसा बंधन , जो कनक-कलशों की भव्य गढ़न को और भी निखारकर रख दे । " [4]

## 2.02 : समसामयिक विषय-वस्तु और भाषा :

शिवानी के उपन्यासों में प्रायः समसामयिक विषय-वस्तु ही उपलब्ध होता है , परंतु कई बार कुछ पात्रों के संस्मरणों एवं स्मृतियों में के माध्यम से वह निकट की कुछ यात्रा तय कर लेती है । सम समसामयिक विषय-वस्तु के निरूपण भाषा भी उसी समकालीन विशेषताओं को लेकर आनी चाहिए । "श्मशानचम्पा" उपन्यास की नायिका चम्पा एक डाक्टर है । वह मि. सेनगुप्त नामक एक उद्योगपति के अस्पताल में डाक्टर है । उसके साथ उसकी सहायक है मिनी । एक बार जब चम्पा नहीं थी तब मि. सेनगुप्ता की पुत्री मयूरी सेनगुप्ता चम्पा की भागी हुई बहन जूही को अपने बंगले पर ले आती है । जूही को गर्भ था और वह इसे गिराना चाहती थी । मयूरी ने कुछ अपनी डाक्टरी दिखाई थी । फलतः उसकी हालत बहुत खराब थी , अतः मिसेज सेनगुप्ता मिनी को उसके बंगले पर बुलाती हैं । समसामयिक भाषा का एक बढ़िया उदाहरण हमें यहां प्राप्त होता है — " तुम्हारे जाने के दूसरे ही दिन बड़े तड़के मिसेज सेनगुप्ता मुझे बुलाने यहां आ गईं । थैंक गोड , तुम नहीं थी । तुम होतीं , तो तुम्हें ही ले जातीं । तुम्हारी बहन की तबीयत अचानक खराब हो गई थी । तुम्हारी बहन का केस न होता जोशी , तो मैं कभी नहीं जाती । पहुंची तो देखा लड़की दर्द से तड़प रही है । तब ही मयूरी सेनगुप्ता इंस्ट्रक्शंस देने लगी — सैलाइन इनडक्शन और

इनइयूस्ड पेंस । जी में आया , एक झापड़ मारकर , छोकरी का मुंह उत्तर से दक्षिण दिशा में मोड़ दूं । करम करेंगी ऐसे और फिर हमें डाक्टरी सिखा-एंगी । सारी रात मौत से जूझकर ही बचा पाई थी लड़की को । सरासर झूठ बोल गई थी दोनों । कहती थीं सोलहवां सप्ताह है , पर कम से कम बीसवां सप्ताह था । चौथे ही दिन उसे दिल्ली पहुंचाकर , मिस्टर सेन-गुप्ता मयूरि को साथ लिए , स्टेशन से लौट रहे थे कि उनकी लिमोसीन की धज्जियां उड़ाकर , पठानकोट एक्सप्रेस धड़धड़ाती निकल गई । दोष मि. सेनगुप्ता का ही था ; गुमटी के चौकीदार को डरा-धमकाकर ही फाटक खुलवा लिया था । .... बाप-बेटी का ऐसा अंत देखकर मिसेज सेनगुप्ता एकदम ही गूंगी बन गई हैं । चुपचाप बैठी ही रहती हैं । ट्रैंक्वि-लाइजर दे-देकर कई दिनों तक मैंने उन्हें बेहोश रखा । .... उनका चेहरा अब मुझ से देखा नहीं जाता । तुम सोच नहीं सकतीं , आई हैव गोन थ्रू हेल । इतने दिनों से उन भावनाहीन आंखों को देखते-देखते ईवन आई नीड ए शॉट । " 5

"कृष्णकली" की कली एक विदेशी कंपनी में नौकरी करती है । उसके चेयरमेन थे मि. शेखरन । शेखरन कंपनी के जिस उच्च सिंहासन पर आरूढ़ थे , उस गद्दी पर अन्य कोई भारतीय अफसर कभी नहीं बैठा था । शेखरन पुराने आई.सी.एस थे , परंतु विवाहिता पत्नी के जीवन-काल में ही किसी अन्य सुंदरी से विवाह कर लेने के कारण उन्हें उच्च सरकारी नौकरी छोड़नी पड़ी थी । अतः शेखरन विदेश चले गये । वहां उनकी भेंट इस कंपनी के मालिक निकोलसन साहब से हुई । निकोलसन साहब ने उसके चेहरे पर चमकती बुद्धिदीप्त आंखों में विलक्षण व्यवसाय-पटुता को देख लिया था । उपन्यास में शेखरन के आफिस , उसमें काम करनेवाली महिलाएं तथा कली के प्रति शेखरन का आकर्षण इत्यादि का जो वर्णन मिलता है , उसमें हमें विषय के अनुरूप समसामयिक भाषा के दर्शन होते हैं । " उनके दफ्तर में एक मात्र कली ही रिसेप्शनिस्ट नहीं थी । अंगरेजों से उजले रंग और कंजी आंखोंवाली कान्वेंट-शिक्षिता सुंदरी पर्वत-कन्या मिस जोशी , उर्वशी-सी नृत्यप्रवीणा रंग-रस का बाल बुनती

मिस पटनायक , जो रिसेप्शनिस्ट बनने से पूर्व देश-विदेश में जाकर अपने अपूर्व कुचीपुड़ी नृत्य से लक्ष-लक्ष विदेशी हृदय रिझाकर मुट्ठी में बन्द कर लौटी थी और तीसरी मिस डटा , जो आकाश की उड़ान से क्लान्त होकर स्वेच्छा से गगनचारिणी ऐयर-होस्टेस का पद त्याग , धरा पर उतर आयी थी । पर फिर भी विशेष काम पड़ने पर कली की ही पुकार मचती । अन्य तीनों सुर-सुंदरियों में इस बात को लेकर आयेदिन नारी-सुलभ ईर्ष्याग्नि की चिनगारियां चिटकती रहतीं , पर फिर भी मि. शेखरन को लेकर कली का नाम खुले आम लपेटने का दुस्साहस किसी का भी नहीं होता था । होता भी कैसे ? आज तक कभी किसीने दोनोंको एकान्त में घूमते भी तो नहीं देखा था । " 6

"तर्पण" उपन्यास की पुष्पा पंत एक स्कूल में प्रधान अध्यापिका है । राज्य के राज्यपाल के स्वागत में उन्होंने एक छोटा-सा कार्यक्रम रखा था , उससे गवर्नर महोदय अत्यन्त प्रसन्न हुए थे । अतः जब प्रदेश के मंत्री का कार्यक्रम बनता है तो उस जिले का जिलाधीश पुष्पा पंत पर पत्र लिखता है --

"प्रिय कुमारी पंत ,

हमारे देश के सुविख्यात मन्त्री श्री भोलादत्त हमारे जिले में पधारे हैं । वर्षों पूर्व वह आपके ग्राम में रह चुके हैं , इसीसे एक बार फिर वहां आना चाहते हैं । पिछली बार सामान्य-सी अवधि में ही आपकी छात्राओं ने जो सुंदर कार्यक्रम प्रस्तुत किया था , उसे देखकर राज्यपाल ही नहीं , उनके साथ राजधानी से आये पारखी संवाददाता भी मुग्ध हो गए थे । मुझे विश्वास है कि इस बार भी आप हमें निराश नहीं करेंगी । कल पन्द्रह अगस्त भी है । स्वाधीनता-दिवस की यह सन्ध्या आपके ही मधुर कंठसंगीत से मुखरित और आपकी छात्राओं के कण्ठस्वर से मधुमय हो , ऐसी विनीत कामना है । " 7

इस पत्र में हमें समसामयिक भाषा की झलक मिलती है । हालांकि "ग्राम" और "सुविख्यात" जैसे शब्द थोड़े अखरते हैं । इनके स्थान पर "गांव" और "लोकप्रिय" शब्दों का प्रयोग वांछनीय था ।

शिवानीजी के लघु-उपन्यास "विषकन्या" की कामिनी कौल एक अत्यंत सुंदर युवती है । वह एयर-होस्टेस है । उसका विमान-चालक डिसूजा एक कामुक व्यक्ति है । एक बार उनका विमान "क्रैश" हो जाता है । परंतु कामिनी और डिसूजा बच जाते हैं । चारों तरफ लाशें छितरी पड़ी थीं । कामिनी के सन्दर्भ में यह बात प्रचलित थी कि उसकी जबान काली है । अर्थात् वह जिसकी भी प्रशंसा करती है, वह जान से हाथ धो बैठता है । एक बार उसने अपने बहनोई रोहित की प्रशंसा की थी, और तत्काल कोबरा के काटने से उनकी मृत्यु हो गई थी । तबसे कामिनी अपने घर को छोड़कर चली गई थी । वह हमेशा पुरुषों से कतराती रहती है । परंतु उस दिन एकांत तथा डिसूजा के कामुक व्यवहार के कारण उसके संयम का बांध भी टूट जाता है और वह उसकी ओर खींची चली जाती है । अन्ततः झील का विषैला पानी पीने के कारण डिसूजा की भी मृत्यु हो जाती है । इस प्रसंग के सन्दर्भ में जो भाषा प्रयुक्त हुई है, उससे साम्प्रतिक समसामयिक भाषा का बोध होता है — " न यह दुर्घटना होती न मुझे अपनी यह मैडोना मिलती, उसके भारी कंठ के अनुपम आकर्षण का मैं भी लोहा मान चुकी थी । इस नौकरी से पूर्व वह आकाशवाणी के केन्द्रों का एक अत्यंत लोकप्रिय समाचार प्रस्तुतकर्ता था । उसके कंठ के इसी जादू पर मेरी अन्य सहकर्मचारिणियां मर मिटती थीं । यह तो मैं आपसे कहना ही भूल गई कि डिसूजा हमारे चालकों में सबसे अधिक आकर्षक भी था । उसकी मां इतालवी थी और पिता था एक गोवानी दंत-विशेषज्ञ । पुत्र के स्वस्थ दांत ही पिता के पेशे का जीवंत विज्ञापन थे ; उस पर सुंदरी मां के काले घने केश और भूरी आँखें भी उसे विरासत में मिली थीं । मेरे सौभाग्य से, उस दिन उसकी उत्तेजित शिराओं की तमतमाहट से सुदर्शन चेहरा ताम्रवर्णी होकर चमक रहा था । धुंधली चांदनी में वह माइकेल एंजेलो की प्रस्तर-मूर्ति सा ही निर्दोष लग रहा था । ... मैंने अपने धड़कते हृदय में संचित, देवदत्त घातक विष की सिरिंज घप्प से चुभोकर एक-एक बूंद खींची और उसे डस लिया । मैं झुकी । उसके घुंघराले बालों पर अपना कांपता हाथ धरकर मैंने कपटी काक के ही छल से

कोकिल के कंठ का स्वर बदल लिया , ` तुम सुंदर लग रहे हो , जोन ? `
मैंने उसे पहली बार उसके क्रिश्चियन नाम से पुकारा था , इसीसे उसका
पूरा चेहरा चमक उठा । " 8

यहां पर "मैडोना" , "दंत-विशेषज्ञ " , " जीवंत-विज्ञापन"
आदि शब्द समसामयिक वस्तु की प्रस्तुति में सहायक होते हैं । शिवानीजी
कई बार तो अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करती हैं , और कई बार अंग्रेजी शब्दों
का हिन्दी रूपान्तर इस प्रकार करती हैं कि उससे भाषा की अर्थवत्ता तथा
छटा में चार चांद लग जाते हैं ।

## 2.03 : ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विषय-वस्तु और भाषा :

पहले निर्दिष्ट किया जा चुका है कि शिवानीजी ने सामाजिक
उपन्यास ही लिखे हैं , ऐतिहासिक या पौराणिक नहीं ; परंतु उनके लेखन
में इतिहास , संस्कृति और पुराणों के कई-कई सन्दर्भ आते हैं । जहां-जहां
उनका विषय-वस्तु ऐसे प्रसंगों में निमज्जित हुआ है , वहां-वहां उनकी
भाषा में ऐतिहासिक , पौराणिक एवं सांस्कृतिक शब्दावली का समावेश
सहजतया हो गया है । वैसे तो उनके सभी उपन्यासों में इस प्रकार के
अनेकानेक प्रसंग मिलते हैं , तथापि यहां उदाहरण-स्वरूप कुछेक प्रसंगों की
भाषा को प्रस्तुत किया गया है ।

"श्मशानचम्पा" उपन्यास की नायिका चम्पा एक डाक्टर है ।
रामदत्तजी का पुत्र मधुकर भी डाक्टर है और वह भी चम्पा को बेतरह
प्यार करता है । चम्पा के कारण ही वह जाति के अच्छे घरों से आये
रिश्तों को ठुकराता है , अतः एक दिन रामदत्तजी आगबबुला होते
हुए चम्पा के निवास पर जाकर फूट पड़ते हैं । रामदत्तजी संस्कृत के
महापंडित हैं , अतः उनकी भाषा में संस्कृत के संदर्भ में सहजतया आ जाते
हैं -- "` मृच्छकटिक ` पढ़ा है छोकरी ? गणिका वसंतसेना का प्रासाद
भी ऐसा ही था । ` रामदत्तजी ने विद्रूप की दृष्टि से कमलेश्वरी की भव्य
भव्य बैठक को देखकर फिर अपनी कठोर वाणी का गंडासा चम्पा की

निरीह गर्दन पर साध लिया ." विदूषक मैत्रेय उस विशाल प्रासाद के सात प्रकोष्ठों को पार करता हुआ ठीक मेरी ही तरह तुम्हारी इस महल्लिक-सी चेरी के साथ आठवें प्रकोष्ठ में पहुंचता है , विविध वस्त्रा-लंकारों से सुसज्जित वसंतसेना के भाई को देखकर उसने जो कहा था , वही कहने को आज मेरी जिह्वा फड़क रही है छोकरी--

> " मा यद्यप्येष उज्ज्वलः स्निग्धश्च सुगन्धश्च ...
> तथापि श्मशानवीथ्यां जातचम्पकवृक्षोऽनभिगमनीयोलोकस्या ..."

" ओह , कैसी मेल खाती पंक्तियां हैं , यद्यपि यह उज्ज्वल , स्निग्ध और सुगंधित है तब भी श्मशानवीथी में विकसित चम्पक वृक्ष की भांति लोगों द्वारा अभिगमनीय नहीं है । कोई भी तेरे पास नहीं आना चाहेगा । चम्पा नहीं , श्मशानचम्पा है तू लड़की । "[9]

"कृष्णकली" उपन्यास में पन्ना की मां मुनीर की जो कथा आयी है , उसका समय निकट अतीत का है , जब हमारे देश में अंग्रेजों का शासन था और छोटे-मोटे रजवाड़े कायम था । कथावस्तु सामंतकालीन है , अंग्रेजी सभ्यता से सम्बद्ध है , अतः उसके वर्णन में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है , उसमें भी उस वस्तु की गंध निहित है । " पन्ना की मां का नाम था मुनीर । देखने में असाधारण रूपवती न होने पर भी उस रौबदार पेशेवर महिला का , सर्वोच्च विदेशी समाज में उठना-बैठना लगा रहता । उसके मांसल कण्ठ की त्रुटिहीन अंगरेजी सुनकर बड़े-बड़े भारतीय अफसर दंग रह जाते , जिसके हाथ में देश की सत्ता थी , उस ललमुंही जाति को जीतने से पहले उनकी भाषा सीखनी होगी , यह मुनीर भलीभांति समझती थी, दो-दो गवर्नेस एक साथ रखकर उसने उनकी भाषा की सरस्वती स्वयं ही अपनी जिह्वा पर खोदकर रख ली , विदेशी समाज का कोई भी जलसा क्यों न हो , माडर्न पार्टी या लाट साहब की पिगस्टिकिंग पार्टी का खेमा , पोलो-प्रदर्शन या लाट की मेम का बज़ार , गहनों से झलमलाती , पान के बीड़े से उंचे कपोलों को कुछ और उंचा उठाये , मुनीर मेजबान की कुरसी से सटी बैठी रहती । उर्दू , हिन्दी और अंगरेजी , तीनों भाषाओं पर

उसका समान रूप से अधिकार था , एक बार उसके विदेशी प्रेमी डिकी ने उसे हंसी-हंसी में "बेगम समरू" कहकर पुकारा तो वह भड़क उठी थी — "इट इज़ नोट ए कोम्पलीमेण्ट डिकी " , उसने कहा था , "क्या तुम नहीं जानते बेगम समरू देखने में कैसी थी ? एकदम साधारण , और क्या तुम चाहते हो कि बेगम समरू की ही भांति मैं भी अपने विदेशी प्रेमियों को ठोकर मारती फिरूं ? " डिकी दंग रह गया था । इतिहास , भूगोल, आयुर्वेद , ज्योतिष सबकुछ पढ़ने के लिए समय कहां से मिल जाता था उसे । तराई में कहां बड़ा गेम मिल सकता है , किस झील की मुर्गाबियां और बतखें प्रसिद्ध हैं , सबकुछ जानती थीं वह । यही नहीं , उसकी बनायी कोकटेल एक-एक अमृत-स्वरूपी घूंट के लिए कितने ही समृद्ध विदेशी अहंवादी घुटने जमीन पर टेककर रह जाते , छोटे-से कद की गुदगुदे हाथ-पैर वाली वह गुड़िया-सी प्रौढ़ा , निकट आने पर भी पन्द्रह वर्ष की किशोरी-सी दीखती । .... लाट साहब के बेटी-दामाद उसके अतिथि होकर आये , तो उनके साथ आया था रावण-सी देह और महिषासुर के-से चेहरे वाला भयानक हब्शी भृत्य रौबी । ऐसा डरावना चेहरा कि अंधेरे में कोई देख ले , तो भय से मूर्छित होकर गिर पड़े । पर आहा , क्या गला था उसका । अपने भारी मांसल कण्ठ से उसने " वीप नो मोर माई लेडी, ओह वीप नो मोर टुडे । " गाया तो मुनीर सिसकियां लेकर रोने लगी ।"-10

शिवानी के लघु-उपन्यास "माणिक " की नलिनी ने एक भव्य आवास-भवन का निर्माण किया था । वह अतुल संपत्ति की स्वामिनी थी । उसके पास एक बेशकीमती माणिक था । दीना बाटलीवाला एक कुख्यात तस्कर है । उसका व्यक्तित्व आकर्षक है । किसीको घास न डालनेवाली नलिनी भी उसके चक्कर में आ जाती है । दीना बाटलीवाला के सम्मुख अपने निवास की चर्चा निकलने पर वह कहती है — " मैंने ही वर्षों जग-जग कर इसका नक्शा बनाया था बहन । कभी-कभी सोचती हूं , किसी बड़े शहर में इसे बनवाया होता तो शायद आप जैसे कला-पारखी इसे कभी सराह लेते । मैंने भी कभी बड़ी मूर्खता से फतेहपुर

सीकरी के शेख सलीम चिश्ती की सीप से बनी दरगाह की टक्कर की इमारत बनाने का सपना देखा था । देख तो रही हैं, ये संग-तराशियाँ, बेल-बूटे-नक्काशी, सब अधूरी ही रह गईं । न मेरे पास लोदी, खिलजी, गुलाम सम्राटों का-सा वैभव है, न इस रोगी बूढ़े शरीर में शक्ति । ... (इस पर दीना बाटलीवाला का एक कथन) " जैसे तैमूर भारत के अद्‌भुत कारीगरों को बंदी बनाकर समरकंद ले गया था, मेरे जी में आ रहा है, आपको भी बन्दिनी बनाकर बम्बई ले चलूं । यू आर ए जीनियस ।" " ।।

इसी प्रकार "कालिंदी" उपन्यास की डा. कालिन्दी की माता अन्नपूर्णा महापंडित ज्योतिषाचार्य रुद्रदत्त की पुत्री थी । अपने सिंह-लग्न के कारण उनका निबाह पति-गृह में नहीं हो सका । पिता के साहचर्य से उन्होंने भी ज्योतिष विद्या में कुछ महारत हासिल की थी । अपनी तथा अपनी पुत्री कालिन्दी की कुण्डली के सन्दर्भ में निम्नलिखित परिच्छेद देखिए --

" कालिन्दी की वर्तुलाकार घुमेरों में लपटी जन्मकुण्डली अन्ना के सामने खुली धरी थी -- श्री गणेशाय नमः -- आदित्यादि ग्रहा सर्वे नक्षत्राणि चराशयः सर्वान् कामान् प्रयच्छन्तु यस्यैषां जन्मपत्रिका, श्रीमन् विक्रमार्क राज्य समयातीत श्री शालिवाहन शके, उत्तरायणे, शिशिर ऋतौ, मासोत्तम मासे पौषमासे शुक्ले पक्षे दशम्यां बुधवासरे, सिंह-लग्नोदये श्री कमलावल्लभपंत महोदयानाम् गृहे, भार्यो मयकुलानंद दायिनी कमला, कुती, कालिन्दी नाम्नी कन्यारत्नम् जीन् अल्मोड़ा नगरे अधांसा ... सिंह लग्न में हुआ जो जातक करै सिंह की असवारी । ... तब अल्मोड़े में दो प्रख्यात गणक माने जाते थे : पंडित मोतीराम पांडे और पंडित रुद्रदत्त भट्ट । उनकी बनाई जन्मकुण्डली का उन दिनों प्रचुर पारिश्रमिक भी देना होता था, पर जैसे एक डाक्टर दूसरे हमपेशेवर डाक्टर से फीस नहीं लेता, ऐसी ही मोतीरामजी ने अपने गुरुभाई रुद्रदत्त की पुत्री अन्नपूर्णा की कुण्डली तब बिना कुछ लिये ही बनाई थी ।

जन्मकुण्डली क्या थी पूरी नौगजी नागपुरी साड़ी । नाना बेलबूटों से सुशोभित , गणेश की सुअंकित मुद्रा के नीचे सुंदर मोती-से अक्षरों में लिखी लिपि में अन्ना की ललाट-गणना , जिस दक्षता से मोतीरामजी कर गये थे उसे विधाता भी पढ़ता तो शायद दंग रह जाता । कैसे आउट हो गया उसका लिखा प्रश्नपत्र । .... अन्नपूर्णा फबकी , अपनी कुण्डली अपने पिता के अस्थिकलश के साथ कनखल में प्रवाहित कर चुकी थी , किंतु वह पंक्ति अभी भी उसे ज्यों की त्यों याद थी — दैवज्ञ मार्तण्ड की पुत्री थी , ऐसी पंक्तियों का मर्म तो समझती ही थी । " क्रूरे हीन बलेऽस्ते बलेस्तगे स्वपतिना, सौम्येक्षिते प्रोज्झिता ।" उसके अभिशप्त सप्तम स्थान स्थित निर्बली ग्रह पर किसी भी शुभग्रह की दृष्टि नहीं थी । ऐसे योगज ग्रह की स्त्री यदि परित्यक्ता न होती तो आश्चर्य की बात थी । " [12]

तात्पर्य यह कि ऐसे प्रसंगों में शिवानीजी की भाषा अपने वस्तु के अनुरूप होती है । इससे उनका संस्कृत , इतिहास , ज्योतिषशास्त्र इत्यादि का ज्ञान भी प्रकट होता है ।

## 2.04 : नगरीय और ग्रामीण विषय-वस्तु और भाषा :

यद्यपि शिवानीजी के उपन्यासों में नगरीय-वस्तु का ही आधिक्य मिलता है , तथापि उनके प्रायः शहरी पात्र पहाड़ी होते हैं , अतः पहाड़ के {कुमाऊं के} ग्रामीण अंचलों का भी उनके वर्णनों में समावेश हो जाता है । यहां यह ध्यानार्ह है कि स्वयं शिवानीजी भी मूलतः कुमाऊं प्रदेश की हैं , परंतु उनका बादका अधिकांश समय दिल्ली , कलकत्ता , इलाहाबाद जैसे शहरों में व्यतीत हुआ है , अतः उनके लेखन में भी यही सब उतर आया है ।

शिवानीजी के उपन्यास "चौदह फेरे" का कर्नल शिवदत्त पांडे मूलतः तो कुमाऊं के पहाड़ी प्रदेशों का है , परंतु कि कलकत्ते में उसका बड़ा व्यवसाय है । पत्नी नंदी को उसने त्याग रखा है । बेटी अहल्या को ऊटी की कोनवेण्ट में पढ़ाया जा रहा है । वह कभी छुट्टियों में आती है , तब अपने पिता की रक्षिता मल्लिका के साथ ही अधिकांश

समय व्यतीत करती है । यहाँ प्रस्तुत उपन्यास से एक उद्धरण शिवानीजी की भाषा के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया जा रहा है --

"और जब चौदह वर्ष की अहल्या सीनियर करके घर लौटी तो मल्लिका दंग रह गई । मल्लिका मौसी की गोदी में लेटकर मचलना अहल्या को अब भी अच्छा लगता था । कैसी प्यारी-सी विदेशी यूडीकोलोन की खुशबू आती थी मौसी के शरीर से । उसे फिर बाहर भेजने का प्रस्ताव हुआ तो वह अड़ गयी कि अब वह कलकत्ता ही में रहकर पढ़ेगी , "बोर्डिंग का खाना खाते-खाते जी ऊब गया मौसी , आज बनाओ न चिकन- बिरयानी ।" वह कहती और चट से कमर में अंचल खोंसकर मल्लिका उसकी मनपसंद चीज़ बनाने में जुट जाती । कभी कर्नल मल्लिका और अहल्या को लेकर पिकनिक पर ही निकल जाते , खजूर और सुपारी के झुरमुट के साये में । मौसी की गोदी में लेटकर अहल्या अंग्रेजी रिकार्ड सुनती और कर्नल लेटे-लेटे एगैथा क्रिस्टी की पुस्तक पढ़ता रहता । सुरमई सांझ की म्लान छाया में कभी-कभी कर्नल मल्लिका की ओर देखकर कृतज्ञता से मुस्करा देता , जैसे आँखों ही आँखों में उसे ऐसी सुखद सन्ध्या के लिए धन्यवाद दे रहा है । तीन-चार वर्ष से मल्लिका उसके शरीर का ही एक अंग बन गयी थी , राखाल सरकार एक मोटर ऐक्सीडेण्ट में बुरी तरह आहत होकर दिमाग और जबान दोनों ही खो बैठे थे । पंगु पति का इनवैलिड चेयर एंग्लोइंडियन नर्स को सौंपकर , मल्लिका ने पति का आफिसी पद ग्रहण कर लिया था । अब वह कर्नल की प्राइवेट सेक्रेटरी थी । 'पाण्डे मोटर्स ' , ' पाण्डे जूट मिल ' , ' पाण्डे स्टील ' सबके कारोबार की जड़ें , मल्लिका की ही मुट्ठी में थी । कर्नल स्वभाव से ही रसिक प्रवृत्ति का था । उसके जीवन में नित्य नवीन नयी मल्लिकाएं आती रहती थीं । मल्लिका भी उनके अस्तित्व से एकदम ही अनभिज्ञ नहीं थीं किन्तु वह जानती थी कि कर्नल के हृदय के ताले में केवल उसीकी कुंजी घूमती थी ।" [13]

"कृष्णकली" की कली जिस कंपनी में काम कर रही थी , वहाँ उसे कई बार विदेशी टूरिस्टों के साथ जाना पड़ता था । इन

टूरिस्टों में कई बार हिप्पियों की मंडली भी होती थी । गंदे कपड़े पहनना , कई-कई दिनों तक न नहाना , गंदी होटलों तथा ढाबों में खाना खाना इत्यादि उनकी आदतें होती थीं । ऐसे ही एक हिप्पी-दल के साथ एक बार कली विभिन्न स्थानों और शहरों के चक्कर लगाती हुई बनारस पहुंचती है । उस समय का वर्णन द्रष्टव्य है -- " कन्धे तक फैले पीले बालों की अयाल झटकाते , उसके [कली के] विदेशी अवधूत ज़िद चढ़ने पर अड़ियल टट्टू से दोनों पैर अड़ाकर खड़े हो जाते । बड़े बड़े-बड़े अल्युमीनियम के पतीलों में घोटे जा रहे सुस्वादु भोजन की सुगंध की लपटों ने दिन-भर इधर-उधर भटके भूखे दल को रोक दिया । ... ओह, डेलीशस , दल की विदेशी छोकरी ने नटिनी की-सी फुर्ती से झुककर सुगंधित बाष्प से कंपित ढंकने को सूंघकर ढाबे के स्वामी ठिगने सरदार को अपने एक ही नीले कटाक्ष से चित्त कर दिया । " सबकुछ एकदम ताज़ा है , मेमसाब , नान करी , तन्दूरी मुर्ग " ,सरदार को शायद इसके पूर्व काशी में दिन-रात आते रहते हिप्पियों की जजमानी निभाने का खासा अभ्यास था । " टिपिकल इण्डियन करी एण्ड टिपिकल इण्डियन शेफ " कहकर मुस्कराती मण्डली जम गयी । ... कली कटकर रह गयी थी । जैसा घिनौना बदबूदार सरदार था , वैसी ही रिकेटी खिसती टीन की कुरसियां । गंदी मोटी गेंडे के खालवाली क्रोकरी और खांव खुजाते घिनौनी अनहेल्दी सूरत के छोकरे नौकर । पर दल के नक्कारखाने में पिछले पन्द्रह दिनों से उसकी तूती का स्वर क्रमशः अस्पष्ट होते हुए एकदम ही विलीन हो गया था । " [14]

शिवानीजी के लघु उपन्यास "मायिक" की दीना बाटलीवाला एक कुख्यात ठगिनी है और बड़े-बड़े शहरों के धनी-संपन्न लोगों से सम्पर्क स्थापित करके उन्हें ठग लेना यह उसका व्यवसाय है । नलिनी मिश्रा के विशाल कला-संपन्न बंगले की थाह लेती हुई , वह उन तक पहुंचती है । वह नलिनी से कहती है -- " बात यह है जी , कि मैं भी कभी आर्कि-टेक्ट थी , " उसने एक लम्बी सांस खींचकर कहा , " अब बम्बई में

[illegible] इंटीरियर डेकोरेटर हूं । फिल्मी तारिकाओं की आवाससज्जा से छुट्टी पाती हूं तो ऐसे ही मंदिर-मकबरों की धूल फांकती नये-नये आइडिया बटोरती फिरती हूं । " वह हंसी और उस उज्ज्वल सुंदर हंसी ने उसी क्षण नलिनी मिश्रा के कठोर हृदय को नवनीत-सा पिघला दिया । बहुत दिनों बाद जैसे किसीने उसके मकबरे की जंग लगी खिड़की को खोल ताज़ी बयार के मदिर झोंके से उसे उल्लसित कर दिया था । ... "सच कहती हूं " , दीना बाटलीवाला ने चाय की चुस्की लेकर कहा , "मैंने आज तक पिंकी सैंडस्टोन और मार्बल की ऐसी अद्भुत मिलावट नहीं देखी । क्या मैं पूछने की धृष्टता कर सकती हूं कि आपका आर्किटेक्ट कौन था ? " बड़ी नम्रता से उसने पूछा ।"[15]

यहां कथावस्तु चूंकि नगरीय-परिवेश से संलग्नित है , अतः उसकी भाषा में वैचारिक एवं शाब्दिक दृष्टि से वही स्तर मिलता है , जो प्रायः शहर के शिक्षित लोगों में पाया जाता है । शिवानी के उपन्यासों की कथावस्तु यों तो नगर-जीवन से संपृक्त [illegible] होती है , परंतु चूंकि उनके प्रायः पात्र ग्रामीण मूल के होते हैं , अतः ग्राम्य कथावस्तु का समावेश भी स्वयमेव हो जाता है ।

"कैंजा" उपन्यास की नंदी के पिता कुमाऊं के प्रसिद्ध ज्योतिषी हैं । उन्होंने अपनी पुत्री की कुण्डली में वैधव्य-योग देख लिया था । गांव का सुदर्शन युवक सुरेश भट्ट नंदी को जी-जान से चाहता है । परंतु बेटी के भविष्य से अभिज्ञ पंडित हेमचन्द्र तिवारी अपने अभिन्न मित्र गदाधर भट्ट के भतीजे सुरेश भट्ट से कैसे करवाते विवाह । अपने स्वार्थ के लिए किसी दूसरे का अकल्याण शास्त्रज्ञ एवं धर्मज्ञ [illegible] शास्त्रीजी कैसे करते । अतः पुत्री को लेकर शहर चले जाते हैं और उसे आत्म-निर्भर करने के लिए उसे ऊंची शिक्षा दिलाकर डाक्टर बनाते हैं । इधर असफल प्रेम की प्रतिक्रिया में सुरेश एक अमानुष व्यक्ति हो जाता है । वह मालदारिन की तेरह साल की बेटी पर बलात्कार करता है और उसे गर्भवती बना देता है । इस संदर्भ में ताई नंदी को इस घटना की सूचना देते हुए कहती है —

" " और जानती है , वह अभागा सुरिया इस बार कैसे नाक कटाकर भागा है ? कैसे कहूं , कुंआरी लड़की के सामने आज एकादशी के दिन , यह सब कहने में लाज आती है । इस बार मालदारिन की पगली लड़की का सर्वनाश कर फरार हो गया है हरामी । अभागी तेरह की भी पूरी नहीं हुई और घाघरी गले से बंधी है । आजकल में कभी दर्द उठ सकते हैं । " एक पल को मोटी रज़ाई और पहाड़ी मन-भर के थुल्मे के नीचे दबी होने पर भी नंदी की देह हिमखंड-सी ठण्डी पड़ गई थी । ... "कौन है री ? लगता है रांड को दर्द उठ गए हैं । सत्यानाश हो इस कुलबोरनी का । अरे सुरेश भट्ट , तू जहां भी है करमजले , तुझे हाथ-हाथ भर के कीड़े पड़ें । " ताई न जाने कब [illegible] जगकर उसके पीछे खड़ी हो गई थीं । " 16

"चौदह फेरे" उपन्यास का परिवेश तो मूलतः कलकत्ता का है , परंतु उसका शिवदत्त पांडे पहाड़ों का है । उसकी पत्नी नंदी पहाड़ों की एक अनपढ़ स्त्री है । कर्नल ने कुल-रीति निभाने के लिए उससे विवाह तो कर लिया था , परंतु उसकी गोदी में एक लड़की को डालकर वह कलकत्ता चला गया था । नंदी अपने भाई-भाभी के यहां अपमानित-सी ज़िन्दगी जी रही है । उसकी भाभी सावित्री एक झगड़ालू और कर्कशा औरत है । वह रात-दिन जली-कटी [illegible] बातें सुनाकर नंदी का जीना हराम कर देती है । यहां उसकी भाषा का एक उदाहरण प्रस्तुत है —

" " सांड जैसी खबीस अपनी बीबी की भी सुध न ले , [illegible] तो थुड़ी है साले पर " , सुनका-सुनाकर कहती , " यहां कौन-सी आमदनी है , मालती वसन्तकुसुमाकर , हिंगाष्टक यही सब बेच-बेचकर धेला पाई मिला, तो बनिये के पैसे चुकाये — ऐसे दलिद्दरों के पल्ले बांध दिया , मेरे मायके में मरी बीस-बीस भैंसें बंधी थी ." .... " कोई-न-कोई बात तो हुई ही होगी , जो खसम ने दूधकी मक्खी-सा फेंक दिया । ऐसी ही शरम थी , तो भाई की छाती पर मूंग दलने क्यों आ गयी । खाने को तो ढाई सेर खाती हो , सवा सेर दूध तो तुम्हारी बिटिया पीवे है । उस पर नखरे देखो मुई के , हाय भैया , मुझे लवंगादिचूर्ण ला दो ,

चयवनप्राश ला दो , बड़ी कमजोरी हो गयी है । हमें लूटकर मुटा रही हो बीबी , क्यों भाई-भाभी का धुआं देखती हो । " [17] यहां पर जो भाषा प्रयुक्त हुई है , वह बिलकुल ग्रामीण कथावस्तु के अनुरूप है ।

## 2.05 : चरित्र-सृष्टि में भाषा का योग :

उपन्यास में लेखक का उद्देश्य मानव-चरित्र का चित्र खींचना ही होता है , परंतु इसके लिए उसके पास जो औजार है वह भाषा का है । कहा जाता है कि उपन्यास यथार्थ की विधा है । डा. देवीशंकर अवस्थी द्वारा संपादित आलोचनात्मक पुस्तक "विवेक के रंग " में आधुनिक साहित्य की विवेचना हुई है । वहां भी उपन्यास-विषयक विवेचना को "यथार्थ की पहचान" ऐसा शीर्षक दिया है । अभिप्राय यह कि यथार्थधर्मिता उपन्यास का प्राण-तत्व है । और इस यथार्थ के निर्माण में भाषा का जो योगदान है उसे नकारा नहीं जा सकता ।

उपन्यास में यह जो चरित्र का निर्माण किया जाता है , वह दो प्रकार का होता है — एक तो स्वयं लेखक के द्वारा और दूसरे अन्य पात्रों द्वारा या स्वयं उस पात्र के द्वारा । प्रथम पद्धति को विश्लेषणात्मक ( Analytical ) और दूसरी को नाट्यात्मक ( Dramatic ) कहते हैं । जहां लेखक के द्वारा पात्र-निरूपण होता है वहां उसके बाहरी व्यक्तित्व तथा गुण-अवगुणों की विवेचना होती है । दूसरी विधि में पात्रों के कथोपकथनों से पात्र-सृष्टि होती है । परंतु इस समूची प्रक्रिया में भाषा की उपादेयता तो अनिवार्यतः रहती है× ही है । यहां शिवानी -जी के उपन्यासों से कुछ उदाहरणों को लेते हुए उक्त बात को कहने का यत्न हुआ है ।

"चौदह फेरे" उपन्यास की सुभद्रा ताई एक बड़ी ही दबंग और मुंहफट औरत है । वह किसीका लिहाज़ नहीं करती । बातों की करारी चोटों से भले-भलों को ध्वस्त कर देती है । शिवदत्त पांडे कलकत्ता की जानी-मानी हस्ती है । कई कंपनियों का मालिक है । परंतु जब वह अपनी पुत्री अहल्या को लेकर गांव पहुंचते हैं , तब सुभद्रा अपने इस देवर

का पानी मिनटों में उतार देती है । अहल्या भी देखकर दंग रह जाती है कि जिस पापा के सामने बोलने की किसीकी हिम्मत नहीं होती, सुभद्रा ताई किस-प्रकार उन्हें पानी-पानी कर देती है । जिस प्रकार का दबंग पात्र है, उसके आलेखन में भाषा भी उसी प्रकार की प्रयुक्त हुई है । यथा — " सुभद्रा का किसी जंगी जहाज-सा विराट वपु द्वार को प्रायः घेरे ही खड़ा था । गोल-मटोल चेहरे पर बड़ी-बड़ी आँखों में संसार के प्रत्येक प्राणी के लिए चुनौती भरी थी । तीन-तीन एम.ए. पास बहुओं को वह लट्टू-सा नचाती थी, पति और तीनों पुत्रों की अफसरी, उसकी चौड़ी मुट्ठी में बन्द थी, वह घर की हाई-कमांड थीं । "[18]

ऊपर जो वर्णन हुआ है, उसका परिचय तुरंत मिल जाता है । सुभद्रा ताई छूटते ही अपने प्रश्न का करारा तमाचा मानो देवरजी के गाल पर जड़ देती है — " क्यों लला, हमारी बंगाली देवरानी को नहीं लाये ? "[19] यह व्यंग्य शिवदत्त पांडे की रक्षिता मल्लिका सरकार को लेकर था । खिसियानी-सी भाषा में जब पांडे कहते हैं कि "बोज्यू, किससे सुन आती हो दुनिया-भर की ऊल-जुलूल बातें । " तो उसके उत्तर में रोनी-सी सूरत बनाकर फूट पड़ती है — " सुनूंगी किससे लल्ला, घर की लछमी को तुम बहा आये, सुख ही होता तो बिचारी आज इस खुशी के दिन सर मुंडाये संडमुसंड जोगियों के ~~xxxx~~ पीछे थोड़े ही भागती । " उसके पश्चात् वह जो अपनी तीन बहुओं का परिचय करवाती हैं, उससे भी उनका चरित्र उद्घाटित होता है — " ये अपने भुवन की बहू है, ज्योतिर्विदजी की लड़की है, एम.ए. पास है, भुवन तो बिड़ला जूट मिल में लगा है । लल्ला आठ सौ पावै है । " वह एक-एक कर पुत्रों के ' क्रेडेन्शियल्स ' देतीं, बहुओं का परिचय कराती जा रही थीं । "यह लल्ला रघुवा की बहू है, इसने भी एम.ए. किया है, बर्मा के मनमोहनजी की बेटी है, रघुवा तो डाक्टर है तुम्हें पता है, आजकल अमेरिका गया है, यह है तुम्हारी छोटी बहू, सुरिया तो हमारा आई.ए.एस. है । इसीसे बहू भी ' डब्बल ' एम.ए. ढूंढी " । स्वर अहंकार से दीप्त हो उठा बहू को डब्बल एम.ए. में जो विशेष परिश्रम

करना पड़ा था उसका पूरा आभास सुभद्रा ने "डब्बल " में पचासों "ब" का प्रयोग एक साथ कर स्पष्ट कर दिया । " [20] यहां पर सुभद्रा का चरित्र-चित्रण करने के लिए जिस भाषा का प्रयोग हुआ है , वह सर्वथा उसके उपयुक्त है । इसमें लेखिका ने एक "टिपिकल" उत्तरभारतीय , या कहें पहाड़ी सास का चित्रण किया है । उनमें जिस प्रकार की प्रदर्शन-प्रियता होती है , उनकी जो एक खास मध्यवर्गीय "मेण्टालिटी " होती है , उन सबका यथार्थ वर्णन करने के लिए , उसी प्रकार की लट्ठमार भाषा का प्रयोग लेखिका ने किया है । दूसरे बीच-बीच में अपनी तरफ से जो लेखकीय टिप्पणियां दी हैं , वह भी चरित्र के व्यंग्य-रूप को उभारने में सक्षम हैं ।

"श्मशान चम्पा " उपन्यास में केसरसिंह नामक एक पहाड़ी नौकर का चरित्र आया है । उस चरित्र को उसके मूल रूप में उठाने के लिए लेखिका ने असल उस भाषा का प्रयोग किया है । यहां तक कि उस पात्र का तकिया-कलाम "साला" भी कई बार प्रयुक्त हुआ है । यथा --

" सब साला दूध उबला चला गया । ये साली गैस-स्टोव की आंच ही बदजात होती है , मेम साब । अपने पहाड़ का चूल्हा हुआ , तो जब चाहा लकड़ी लगाकर आंच तेज़ कर ली , जब चाहा , बाहर निकाल , मंदी कर ली । पर ये हमारी गैस तो चिता के माफिक धू-धू कर जली जाती है । साब से कई दफे कहा , साब , एक छोटा चूल्हा डाल लूं ? पर एकदम बिगड़ गया साब । अब तुम आ जाओगी मेम साब , तो छोटा-सा चूल्हा डाल लेंगे । फिर आपकी उस आंच की सिंकी पहाड़ी बेड़ रोटी खिलाऊंगा । फूलकर एकदम डिब्बा , अंदर से हींग से छौंकी उड़द की पिट्ठी । मेरी भौजी कहती थी ," लला ,शादी से पहले तुम्हारे हाथ की बेड़ुआ रोटी खायी होती , तो क्या तुम्हारे इस निकम्मे दाज्यू के आंचल लगती । " बड़ी मजाकिया हैं हरामिन भौजी । वह खुक से हंसा , फिर भावी स्वामिनी का सफेद चेहरा उसे सहमा गया ।" क्यों मेम साब , तबीयत ठीक नहीं लग रही है क्या ? लेट

जाइए आप । सुबह से तो चरखी माफिक घूम रही हैं । चाय बना लाऊं एक कप ? " .... जब केसरसिंह बाजार में सब्जी लेने गया तो मेम साब के लिए बेले का पन्नी-गुंथा गजरा भी लेता आया था । उस संबंध में वह मेमसाब से कहता है — " एकदम कली का गजरा है साला , भीले कपड़े में लपेटकर रखना बोला है मेम साब । कल तक खिल जाएगा । साब तो कल आएगा न । " 21

## 2.06 : भाषा में प्रयुक्त विचार और चरित्र :

पात्र या चरित्र के कार्य ही नहीं , प्रत्युत् उसके विचार भी उसके संस्कार , शिक्षा , परिवेश आदि के अनुसार होते हैं और फलतः भाषा का स्तर भी इन विचारों के अनुरूप होता है । जहां गंभीर विचार होते हैं , वहां भाषा भी गांभीर्य धारण किए हुए रहती है , और जहां हल्के चंचलतायुक्त विचार होते हैं , वहां भाषा का स्तर भी हल्का-फुल्का ही रहता है ।

"कृष्णकली" उपन्यास की कली मन-ही-मन प्रवीर को चाहती है । प्रवीर अभी तक अनेक कन्याओं को ठुकरा चुका है । उसकी पसंद काफी ऊंची है । कली सुंदर , कोन्वेण्ट-शिक्षिता , कुशाग्र-बुद्धि और स्मार्ट है । परंतु प्रवीर कली के अतीत के कुछ काले पृष्ठों से परिचित है , अतः वह उससे खींचा-खींचा सा रहता है । कली प्रवीर के मकान में ही रहती है और प्रवीर की अम्मां उसे बहुत पसंद भी करती है । परंतु प्रवीर की बहन माया कली से भीतर-ही-भीतर जलती-भुनती रहती है । अतः एक बार माया जब कली को अपने कक्ष में कोई सरप्राइज़ देने बुलाती है , तब कली को कई प्रकार के विचार आते हैं । शिवानीजी ने उसका जो चित्रण किया है उसमें पात्र के विचार के अनुरूप भाषा का सक्षम रूप मिलता है । यथा —

"आज उसी कल्पनालोक का वर्षों से बन्द जंग लगा ताला जैसे स्वयं ही खटाक से खुल गया था । अस्पष्ट अंधकार में भटकती वह शून्य में बाहें फैलाती फिर किसे खोजने लगी थी ? क्या पता उसकी

अनुपस्थिति में उस दम्भी व्यक्ति ने उसके सौन्दर्य का लोहा मान लिया हो । उसे पाने के लिए वह शायद वैसे ही व्याकुल हो उठा हो , जैसे आज तक असंख्य पुरुष नतजानु होकर उसके सम्मुख व्याकुल हो लड़खड़ाकर बैठ गये थे । क्या पता चुलबुली माया उसे यही सरप्राइज़ देने बुला गयी हो । दूसरे ही क्षण उसके पैरों के तले से ठोस धरातल को उसकी कुशाग्र विवेक-चेतना ने स्वयं ही खींच लिया । कैसा बचपना था उसका । जिस माया से वह पहली बार ऐसी घनिष्ठता से बोल पायी थी , वह क्या इसे उसे ऐसा सरप्राइज़ देने बुला सकती थी ? और फिर जिस व्यक्ति को लेकर वह निरर्थक रसीला ताना-बाना बुन रही थी , वह उसकी जीवन-पुस्तिका का एक-एक वर्जित परिच्छेद पढ़ उसे दूर नहीं पटक चुका है ? "22

"चौदह फेरे" उपन्यास का कर्नल तो पढ़ा-लिखा और देश-विदेश घूमा एक अनुभवी व परिपक्व व्यवसायी है , परंतु उसकी पत्नी नंदी पहाड़ी गांव की है । उन दोनों में कोई मेल नहीं है । वह अपनी पुत्री अहल्या को लेकर चिंतित है कि यदि वह उसकी गंवार मां के पास रही तो चौपट हो जायेगी । इस संदर्भ में उसकी जो सोच है उसे शिवानी-जी ने निम्नलिखित पंक्तियों में अभिव्यक्ति दी है --

" कर्नल अपनी सोयी पुत्री को देख रहा था । आश्चर्य था कि बच्ची के चेहरे का कहीं भी मां के नैन-नक्श से मेल नहीं था । यदि होता तो शायद कर्नल उसकी ओर देख भी नहीं सकता , नन्दी के प्रति उसे ऐसी नफ़रत न जाने क्यों थी , न वह इसकी कोई कैफियत सुन पाता था , न पाना चाहता ही था । काश , नन्दी में कहीं भी उसके सामाजिक स्तर को ग्रहण करने की गुंजाइश होती ? जब कभी कर्नल उसे अपनाने का , सुधा-रने का संकल्प लेकर आगे बढ़ता , अपने फूहड़ पहनावे और बोल-चाल के हथियार से वह उसे दूर ढकेल देती । कर्नल ने अब धोखा ही छोड़ दिया था , किन्तु पुत्री के भविष्य को वह किसी भी प्रकार नन्दी के हाथों सिरजे जाने के लिए नहीं छोड़ सकता था । इसीसे उसने अविलंब उटकमण्ड के कान्वेण्ट स्कूल में उसे भर्ती कर दिया । मदर मारिया ने बड़े प्यार से उसे गोदी में लिया , तो वह दांत काटकर रोती भागने लगी । लाल-लाल गोरे से चेहरेवाली मेम उसने कभी देखी नहीं थी , उस पर काला

झब्बा और हुड देखकर वह डर गयी , पर मदर ने हंसकर उसे प्यार से फिर बुलाया और वह डरती-डरती मदर के पास गयी । मदर की नीली आँखों के स्नेह और करुणा ने कैसे-कैसे जंगली और उद्दण्ड बच्चों को जीत लिया था । " 23

उपरोक्त परिच्छेद में बीच-बीच में कहीं दूसरे विधान आये हैं , परंतु विचार या सोच से संबद्ध जो विधान हैं उनकी भाषा चरित्र के मानसिक स्तर के अनुरूप ही है ।

"भैरवी" उपन्यास की चन्दन पर चलती ट्रेन में चार गुण्डे बलात्कार करते हैं । उसके पति को बांधकर उसके सामने यह घृणित कर्म किया जाता है । अतः आत्महत्या के विचार से वह ट्रेन से कूद पड़ती है । परंतु स्वामी भैरवानंद तथा उनकी भैरवी मायादी उसे बचा लेते हैं । कई दिनों के बाद उसे होश आया था । उसके बाद से वह वहीं रह गई थी । परंतु वहां भी भैरवानंद की कुदृष्टि उसके रूप पर मुग्ध हो जाती है और वह चन्दन को अपनी नयी भैरवी बनाने का संकल्प उठा लेता है । उसी संकल्प के तहत वह माया को सांप से डंसवा देता है । चन्दन माया के आदेशानुसार वहां से भाग खड़ी होती है और दिल्ली स्थित विष्णुप्रिया के पास पहुंच जाती है । विष्णुप्रिया समझती थी कि वह माया की चेली बनकर दिल्ली घूमने आयी है , परंतु चन्दन के मुंह से सारा वृतान्त सुनकर वह उसे अधिक समय रखने के लिए तैयार नहीं होती है । उस समय उसके मन में जो विचारों का द्वन्द्व मचता है , उसका बड़ा ही सटीक भाषा में लेखिका ने वर्णन किया है । यथा —

" इस रूप की चिंगारी को , अपने यहां के बारूदखाने में रखने का साहस , विष्णुप्रिया सहसा खो बैठी । रानीजी का युवा भानजा बीच-बीच में , अपने मित्रों को लेकर आता रहता था । फिर स्वयं विष्णुप्रिया के गुरु भी तो उससे मिलने कभी आ सकते थे । जिसके अलौकिक रूप ने , माया के सिद्ध सहजिया का हृदयासन डिगा दिया ,

वह क्या उसके अधेड़ गुरु को विकार तरंगों में घुरनियां नहीं खिला सकता था ? "[24]

अभिप्राय यह कि जिस प्रकार का चरित्र होता है, चरित्र का जो परिवेश होता है, उसके विचार भी उसीके अनुरूप होते हैं और लेखक जब उनके विचारों का आलेखन करता है, तब वह उन-उन चरित्रों की भाषा का ही आश्रय ग्रहण करता है।

2.07 : चरित्रों के विभिन्न स्तर और भाषा :

पूर्वनिर्दिष्ट पृष्ठों में इसे भलीभांति समझाया गया है कि यथार्थ चरित्र-सृष्टि के निर्माण में भाषा का बड़ा महत्वपूर्ण योग होता है। चरित्रों के स्तर अलग-अलग रहते हैं। वातावरण, शिक्षा, संस्कार, व्यवसाय, अवस्था, लिंग-भेद जैसे अनेक कारक हैं जो नाना प्रकार के चरित्रों की सृष्टि करते हैं। अतः लेखक या लेखिका उन चरित्रों का निर्माण करते समय उस प्रकार की भाषा का ही प्रयोग करते हैं। पात्र यदि ग्रामीण परिवेश का है तो उसकी भाषा भी ग्रामीण परिवेश की रहेगी। चरित्र यदि शहरी है तो भाषा उसके अनुरूप होगी। शहरों में भी बम्बई, बनारस और लखनऊ जैसे शहरों में भाषा के अलग-अलग स्तर मिलते हैं। चरित्र यदि मुसलमान है तो उसकी भाषा में मुस्लिम कल्चर से जुड़े हुए शब्द जरूर आयेंगे। उसकी बातचीत में " "सुभानल्लाह" "इंशाअल्लाह" या "वल्लाह" जैसे शब्द अवश्य पाये जायेंगे। वहां भी चरित्र यदि लखनऊ का है तो उसकी भाषा में उर्दू की नज़ाकत और नफ़ासत मिलेगी और चरित्र यदि हैदराबादी है तो उसकी भाषा में "दक्खिनी" का पुट अवश्य मिलेगा। गरज यह कि चरित्र के अनुरूप भाषा का प्रयोग लेखक करता है और इसलिए चरित्र-सृष्टि और अतएव उपन्यास-लेखन में वही लेखक या लेखिका सफल हो सकते हैं जिनका अपने चरित्रों की जीवन्त भाषा से जीवन्त संपर्क हो। शिवानीजी के पास अनुभव की पूंजी है। भारत के कई प्रांतों और रियासतों में वह गयी भी हैं, अतः उन्होंने जिन चरित्रों का आलेखन किया है,

उनकी यथार्थ भाषा को भी वह ले आयी हैं । यहां विभिन्न स्तर के कुछ चरित्रों की भाषा पर विचार किया जा रहा है ।

"मायापुरी" उपन्यास की शोभा एक कुशाग्र बुद्धि की लड़की है । अठारह वर्ष की आयु में ही उसने बी.ए. कर लिया था । संस्कृत पर उसका विशेषाधिकार था । वह रात-दिन संस्कृत साहित्य ही पढ़ती रहती थी । दूसरी तरफ सतीश की बहिन मंजरी एक आधुनिक युवती है और वह अंग्रेजी-साहित्य की हिमायती है । निम्नलिखित कथोपकथन से इन दोनों चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है । भाषा भी पात्रानुरूप प्रयुक्त हुई है । यथा —

शोभा जब मंजरी के कमरे में पहुंची तब मंजरी पलंग पर अध-लेटी स्टीफेन ज्विग का कोई अंग्रेजी उपन्यास पढ़ रही थी । उसे देखकर वह बोली -- ` तुम भी बस क्या हो शोभा , ऐसी सुंदर रात है , सोचा था , थोड़ी दूर तक घूमने जायेंगे , पर तुम्हें जब वैराग्यशतक से छुट्टी मिले तब न ? मैं तो कहती हूं , पढ़ना ही है तो पढ़ो प्लेनेयर , टामस मान , टामस इलियट , पर तुम पढ़ोगी वैराग्यशतक तो कभी छांदोग्य-उपनिषद । तभी तो दिमाग में भरा है निरा काठ । लड़कों को देखती हो तो ऐसी भड़ककर भागती हो जैसे छूने पर पत्थर बन जाओगी । तभी तो युनिवर्सिटी में तुम्हारा क्या नाम रखा है , पता है ? ` .... हंसकर शोभा बोली —` क्या नाम भी रखे जाते हैं यहां ? ` ... ` जी हां , ` मंजरी ने कहा , ` जिसने तुम्हारा नाम रखा है , उसकी बुद्धि की प्रशंसा करनी पड़ेगी ; व्हाई , हाउ इट सूट्स यू , `मार्बल प्रिंसेस ` .... ` हे संगमरमर की राजकुमारी , यदि कष्ट न हो तो आसन ग्रहण कीजिए । ` ..... शोभा हंसकर बैठ गई , बोली —` मंजरी मुझे कभी ज्यादा बोलने का अभ्यास नहीं है । तुम्हें तो पता है न , इतने दिनों से गांव में रही हूं , कब कुछ गंवारपन कर बैठूं , इसीसे चुप रहती हूं ।` . 25

इसी उपन्यास की सविता एक बड़े बाप की बेटी है । उसके पिता भारत सरकार में राजदूत हैं । कभी सतीश के पिता पर उन्होंने उपकार किया था । अतः सतीश की माता गोदावरी ने उस ऋण को चुकाने के लिए सविता को अपनी बहू के रूप में चुन लिया था , या कहें चुनने पर विवश थीं । सविता की काया स्थूल थी और पिता के झूठे लाड़-प्यार ने उसे और भी बिगाड़ दिया था । वह स्वयं को अल्ट्रा माडर्न समझती है । यहां जो परिच्छेद दिया गया है , उससे उसके चरित्र — बाह्य तथा आंतरिक — पर काफ़ी प्रकाश पड़ता है । यथा —

" वह [शोभा] मंजरी के साथ यूनिवर्सिटी से लौट रही थी कि धीमे से शब्द के साथ बड़ी-सी बैंगनी कार खचाक से उन्हीं के पास रुक गई : " चलिए आप लोगों को घर पहुंचा दूं । " — चौंककर शोभा ने देखा , एक स्थूलांगी युवती ड्राइव कर रही है । एक हाथ स्टियरिंग व्हील पर था और दूसरा खिड़की पर , बाल छोटे-छोटे और लड़कों की जुल्फों जैसे कटे थे । आंखों की भौहों का निजी सौन्दर्य कितना था , कहना कठिन है । पेन्सिल से अंकित दो महीन रेखाओं के बीच एक छोटी-सी लाल बिन्दी भी है और रंग इतना गोरा था कि आंखों में लगता — जैसे तेज सूर्य की ओर आँखें करने से स्वयं ही आँखें बन्द हो जाती हैं । उसकी आंखों पर धूप का चश्मा लगा था । लाल-लाल दोनों रंगे ओठों को रूमाल से पोंछकर वह लिपी-पुती मूर्ति फिर बोली — " कम इन , आइए - आइए । " मंजरी चुप थी , बोली — " यह है शोभा , दुर्गा मौसी की लड़की और शोभा , यह है सविता । " शोभा ने हाथ जोड़े , सविता ने जैसे उसीको देखने को चश्मा उतार लिया — आँखें बड़ी-बड़ी सुंदर । फोटो की आंखों को शोभा ने पहचान तो लिया पर और सबकुछ बदल गया था । गाल फूलने , आँखें छोटी और नाक फैली लग रही थी । दोनों आगे की सीट पर बैठ गईं और सविता ने कार चला दी । शोभा ही उससे सिमटकर बैठी थी । तीव्र विदेशी सुगंध से उसके सिर में दर्द-सा होने लगा । सविता की नाइलन की साड़ी बार-बार फहराकर उसे छूती जा रही थी । "आप यहीं पढ़ती हैं क्या ? " सविता ने शोभा से

पढा । " जी हां , " शोभा उत्तर देकर फिर चुप हो गई । घर आ गया था , सविता ने कार रोक दी , बोली - " चलिए , मैं भी अम्माजी को देख आऊं । समय ही नहीं मिलता , आजकल जिमखाना की मैच के मारे कहीं आ-जा ही नहीं सकती । " शोभा सबके पीछे चली , सविता सीढ़ी चढ़ रही थी , अपने भारी-भारी पैरों को उसे बड़े यत्न से उठाना पड़ रहा था , सच , बेडौल मुटापा हो गया था उसका । उस पर वेश-भूषा यदि सीधी-सादी होती तो सम्भव था मुटापा कुछ कम लगता , ऊंचे-ऊंचे ब्लाउज , छोटी मैग्या बाँहें , कटी भौंहें और आवश्यकता से अधिक पाउडर । वह अन्दर गई तो शोभा बाहर ही खड़ी रही । गोदावरी बोली - "आ जा बेटी , तेरी भी तो भाभी है । " .... शोभा सिर झुकाकर गोदावरी के पैरों के पास बैठ गई । सविता निस्संकोच सास की कुशल , ब्लडप्रेशर , पल्स इत्यादि पूछ रही थी । फिर बोली — " अच्छा अम्माजी , अब मैं चलूं , फिर आऊंगी । " शोभा उठ खड़ी हुई । सविता बोली — " चलिए, आप कहां रहती हैं ? आपको भी कार में छोड़ दूं ? " शोभा का मुंह लज्जा से लाल हो उठा । वह कैसे कहे कि वह इसी गृह की आश्रिता है । उस महिमामयी राजदूत-कन्या के सम्मुख वह पत्ते-सी कांप उठी । गोदावरी बोली — " यह तो यहीं रहती है , मंजरी के साथ पढ़ती है , मैंने ही गांव से बुला लिया था कि यहीं साथ-साथ पढ़ेगी । " 26

उपरोक्त परिच्छेद में लेखिका ने न केवल सविता के कथोपकथनों में बल्कि उसके रेखांकन में जिस भाषा का प्रयोग किया है , उससे इस पात्र की प्रदर्शनप्रियता , भौंडापन वगैरह साफ झलकता है । इससे यह भी प्रतीत होता है कि लेखिका का उसके प्रति जो व्यवहार है वह व्यंग्यात्मक है । शोभा और सविता की विसदृशता भी यहां सशक्त तरीके से आकलित हुई है ।

शिवानीजी के उपन्यास "कृष्णकली" में कली जिस पहाड़ी-परिवार में रहती है , उस परिवार का एक दामाद है दामोदर । वह थोड़ा भावुक प्रकृति का है ; कली को देखकर उसका रोम-रोम कामातुर हो जाता है । एक स्थान पर उसका जो वर्णन लेखिका ने किया है , उससे

दामोदर के साथ-साथ कली के अपूर्व सौन्दर्य का परिचय भी प्राप्त होता है । यथा —

" दामोदर प्रसाद की क्षुधातुर दृष्टि अब तक कली का अर्धांग लील चुकी थी । अब वह बड़े मनोयोग से उस मन्दोदरी की क्षीण कटि को अपनी आँखों के इंचीटेप से नाप रहा था । पर वह क्या पहला ही पुरुष था जिसकी आँखें कली की इस सुडौल कटि पर नग-सी जड़ गयी थीं ? ... "लगता है हमारी विदेशी उक्ति तुम्हारी ही इस मुट्ठी भर की कमर के लिए लिखी गयी है मिस मजूमदार — फ्रेंच परफ्यूम की बोतल को गाल से सटाकर वह विज्ञापन बनी चित्र खिंचवा रही थी कि विदेशी फोटोग्राफर उसके कानों के पास आकर फुसफुसा गया था — जानती हैं कौन-सी विदेशी उक्ति ? " यू शुड आल्वेज़ होल्ड ए बोटल बाई नेक एण्ड ए वुमन बाई हर वेस्ट । " ... आज दामोदर प्रसाद को उसी उक्ति की मूक पुनरावृत्ति करते देख कली मन-ही-मन हंसने लगी । एक टीनएजर पुत्री का पिता है यह व्यक्ति, कौन कहेगा ? " 27

इसी उपन्यास में राजा गजेन्द्र किशोर का जो चित्रण लेखिका ने किया है, वह भी भाषा की दृष्टि से लाजवाब है । प्रवीर उस पहाड़ी अम्मा का बेटा है जिसके यहां कली रहती है । कली प्रवीर को मन-ही-मन चाहने लगी है, परंतु प्रवीर की सगाई कलकत्ता के एक सुप्रसिद्ध पाडे-परिवार में होती है । पाडेजी के संबंध बड़े-बड़े लोगों से हैं । राजा साहब भी उनमें से एक हैं । आसुरी व्यक्तित्व का मालिक वह बनैला बुंदेलखण्डी सुअर सा बदशक्ल आदमी परम भोजनवीर भी है । लेखिका ने उसका जो चित्र अंकित किया है, उसमें प्रयुक्त भाषा भी उसके अनुरूप ही है । यथा —

" "एई जे गोजेन, देखो केमोन राजा जामाई पेयेछी " {यह देखो गजेन्द्र मुझे कैसा राजा दामाद मिला है} .... पहले उसने प्रवीर के प्रशस्त ललाट को चूमा, फिर दोनों हाथ पकड़कर अपनी छाती पर धर लिये । " आहा बुक जुड़िये गेली मां लोक्खी " — {आहा छाती ठण्डी

हो गयी माँ लक्ष्मी ? वह सकुचायी कुन्नी की ओर देखकर बोला ? ?इसी कुन्नी के साथ प्रवीर की सगाई हुई थी ? .... अंगुलियों में रंग-बिरंगे माणिक-मोतियों की अंगूठियां , सूर्यमुखी के फूल-सी चौड़ी घड़ी , महीन जरीदार कन्नी की धोती , चुना कुरता और भयावह भालू-सा रोयेंदार शरीर । कुन्नी को माँ-माँ पुकारता वह वह क्रूर नरव्याघ्र की-सी जिस दृष्टि से उसे देख रहा था , वह निश्चय ही स्नेही पुत्री की नहीं थी । कभी वह क्षुधातुर दृष्टि से उसके नीचे तक खुले गले पर निबद्ध होती , कभी आकर्षक नितम्बों पर झूल रही करधनी पर । ... वह बराबर बंगला ही बोले जा रहा था — " की है जामाई बाबू — बांगला शीखते पारले ना ? ? क्यों हे जामाई बाबू , बंगला नहीं सीख सके क्या ? ? इस घर में तो बंगला ही चलती है प्यारे । चटपट सीख डालो । हमारी कुन्नी का रवीन्द्र संगीत सुना या नहीं ? " .... " ओहे पाण्डे , एक टु मिष्ठी दाओ देखी । " ? अरे पांडे , ज़रा मिठाई बढ़ाना इधर ? और कटग्लास के ओवल डोंगे से , एक-एक कर भीमाकार " क्षीर-कदम्ब " सुरसा के-से फैलाये विराट मुख में ऐसे जाने लगे जैसे झरबेरी हों । .... उस व्यक्ति को खाने की क्षमता देख कर प्रवीर दंग रह गया । जीवन का-सा ही असंयम वह खाने में भी बरतता था । कभी काले-काले भुजंग से हाथों की मोटी सौसेज-सी अंगुलियों से नान भकोसता , कभी मिठाई और फिर मुर्ग के बड़े-बड़े टुकड़ों पर बिरयानी का केसरिया थक्के का थक्का डाल लेता । उसकी लोलुप दृष्टि , गोल मेज पर सजे तरह-तरह के व्यंजनों की परिक्रमा-सी कर रही थी । एक साथ ही प्लेट को वह ऐसे भरकर रख ले रहा था , जैसे तनिक-सा विलम्ब करने पर सब चीज़ें चुक जायेंगी । .... खाने के बाद टूथ पिक का पूरा डिब्बा ही ले कर वह अलस तृप्त अजगर की भांति आराम-कुरसी पर लद गया । " जा खेयेछी । " ?कस कर खाया है ? कहता , वह गगनभेदी डकारों के सिंहनाद से खाने का कमरा गुंजाता , नितान्त घिनौने ढंग से दांत कुरेद-कुरेद कर मांस , मछली के अवशेष निकालता , ज़मीन पर ही थूकने लगा । " 28

"गैंडा" उपन्यास की राज सुपर्णा के पति पर कब्जा जमा लेती है, तब राज उसके सिकंजे से पति को मुक्त कराने के लिए तंत्र-मंत्र, पंडित-मौलवी आदि का सहारा लेती है। ऐसे ही एक मौलवी के पास जाती है, तो वह राज को उसके रास्ते से हटाने का उपाय बताता है। यहां चूंकि वह मौलवी मुसलमान है, उसकी भाषा में मुसलमानी लहजे का "टच" लेखिका ने दिया है। उदाहरण द्रष्टव्य है —

" एक चीज दूंगा, उसे ऐसी जगह में गाड़कर रख देना, जहां वह उसे कम से कम एकबार लांघ ले ; पर कोई उससे पहले उसे न लांघे, समझी ? अगर एक बार लांघ गई तो इंशाअल्लाह, महीना बीतते-बीतते तुम अपनी चीज पा लोगी। ...: बेटी तुम्हारी चीज मिल जाये तो अपनी इस छोटी बहन का भी ख्याल करना, " चलते-चलते मौलवी ने कहा था, " मैं आज तक न जाने कितनों के लिए खुदा से दुआ मांग, उनकी खोयी चीजें उन्हें लौटा चुका हूं, पर अपनी फाल अब तक नहीं खोल पाया। असल में नमक से ही नमक नहीं खाया जाता बेटी, अपने लिए कुछ मांग नहीं सकता। औलाद के नाम पर एक यही लड़की है। इसका रिश्ता तय हो चुका है। तोला-भर भी सोना कहीं से मिल जाये तो कपड़े तो खुदा जुटा ही देगा, इन्शाअल्लाह, तुम्हें तुम्हारी चीज़ मिलते देर नहीं लगेगी — चोर अभी घर ही में है। " 29

इसी उपन्यास में लेखिका ने राज के सौन्दर्य का भी उपयुक्त भाषा में वर्णन किया है। यथा — " कितनी सुंदर लग रही थी कमबख्त। कटे बाल अर्द्धनग्न आकर्षक कन्धों पर सधे गुच्छों में झूल रहे थे ; पतली कमर से नीचे उतरी नीली शिफौन की पारदर्शी नीलाभ आभा में सफेद सपाट पेट निरभ्र उज्ज्वल आकाश-सा चमक रहा था ; उस पर नन्हीं घंटियों में टुनकती चांदी की पतली करधनी, चौथ की चन्द्रिका-सी, रुपहली हंसिया के आकार में मुड़ी कितनी आकर्षक लग रही थी। न चाहने पर भी आंखें क्षीण कटि के उस किंकिणी जाल में उलझ जातीं और फिसलती चली जातीं। गजब की रुचि थी उसकी — अपने प्रत्येक आकर्षक गढ़-

टीले पर वह जानबूझकर ही ऐसी छोटी-मोटी झण्डियां गाड़ देती थी कि उनका अस्तित्व विपक्षी को शत्रु का अभिमान चूर करने की चुनौती में निरन्तर ललकारता रहे । गले में लटके उसका अठनिया तांबे का तावीज उस दिन भी दो उत्तुंग चट्टानों के बीच बह रही किसी क्षीण पहाड़ी नदी की ताम्रवर्णी धारा के ही अनोखे तेज से चमक रहा था, कानों में थी कुण्डलाकार चांदी की बालियां — उसकी सज्जा के प्रत्येक प्रसाधन की सांकेतिक शक्ति ऐसी प्रबल थी कि देखने वाले के मन में स्वयं रंग-बिरंगी कल्पनाएं जग उठे । विवेकी से विवेकी पुरुष की नरता, शौर्य, बल, सौष्ठवको वह अपनी अराल अंगुलियों में पिस्सू ही मसल सकती थी । लगभग अनावृत्त उस सुडौल देहयष्टि में भी कौशल से बरबस बन्दी बनाए गए यौवन की विवश जकड़न निकट से देखने पर भी नहीं पहचानी जा सकती थी । * 30

"भैरवी" उपन्यास के स्वामी भैरवानंद अपने पूर्व-जीवन में शिवशंकर स्वामीनाथन थे । मायादी उनकी भैरवी है । पहले वह बाल-विधवा थी । फिर वल्लभी अखाड़े की भैरवी वैष्णवी बनी, फिर वहां से सधवा होकर किसी घरबारी नाथ जोगी के साथ चली गई । उस जोगी के साथ माया हरिद्वार के कुम्भ मेले में गई और स्वामी भैरवानंद को देखा तो उनकी आत्माहारी दृष्टि से बिंधकर अपनी बसी-बसायी गृहस्थी को छोड़कर इनके पीछे चली आई । अब भैरवानंद चन्दन के सौन्दर्य से आकृष्ट हो एक संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद उससे लिखवाते हैं । शिवशंकर अंग्रेजी के विद्वान रहे होंगे । अतः अनुवाद अंग्रेजी में है । उसमें जो वर्णन है उसकी सांकेतिकता भैरवानंद के आंतरिक मन में क्या चल रहा है, उसे प्रकट कर रही है । अतः भाषा भी उसके अनुरूप आयी है । यथा —

* आई एम द लोर्ड आफ आल माय सेन्सिज / आल अटैचमैण्ट्स हैव आई शैड / ईवन फ्रीडम स्पोर्ट्स मी नोट / चेन्जलेस एम आई —फोर्मलेस / एण्ड ओमनीप्रेजेन्ट / आई एम शिव, शिव इज़ इन मी । ....

ह्वेअर कुड वन फाइण्ड , एनअदर एक्जाम्पिल आफ सच ब्यूटी ? / द वेअर सर्फेस आफ हर मिरर इज अनवर्दी आफ द फेस , व्हीच इट रिफ्लेक्ट्स / लाइक द स्वार्म्स आफ बीज , फ्लाईंग टू द पारिजात , लाइक द सोल्स / आफ द सेजिस , एस्पाइरिंग टू द मेडिटेशन आफ आत्मन , सोटू द आईज आफ मैन , ले एसाईड आल एक्टीविटी एण्ड डाइरेक्ट देमसेल्व्ज टूवर्ड्स हर एलोन । ... कहां मिलेगा ऐसा सौन्दर्य ? उस सुंदरी का दर्पण भी उसके मुखको प्रतिबिंबित करने की क्षमता नहीं रखता । पारिजात की सुगन्ध से खिंची भ्रमरावलि-सी आत्मन में एकाकार होने की आकांक्षा में साधनारत तपस्वियों की आत्मन् सी — उसे देखते ही मानवमात्र की दृष्टि सबकुछ छोड़ ऐसी की ओर खिंची चली जाती है ।" 3।

"कस्तूरीमृग" "कस्तूरी मृग" के नायक के पिता एक रूपसी तरुणी गायिका के मोहपाश में फंसकर घर-गृहस्थी , पत्नी-पुत्र सबकुछ विस्मृत कर बैठते हैं । रातदिन उसके साथ ही बीतते हैं । उसीमें नायक की मां अकाल मृत्यु को प्राप्त होती है । नायक की परवरिश और देख-भाल घोष बाबू करते हैं । लेखिका ने उनका जो वर्णन किया है , उससे उनके चरित्र पर भलीभांति प्रकाश पड़ता है । यथा —

" "घोषबाबू , आपके घर में और कोई नहीं है ? " मैंने {नायकने} एक दिन पूछ दिया । ... " अरे , घर ही नहीं है बाबा , तो कोई के केहां से होगा , गिन्नी {पत्नी} होता तो हमको फजीर में रियाज करने देता ? " वे कहां को केहां और भोर को फजीर कहते थे , उन्हें बहकाने में मुझे बड़ा आनंद आता था । सच पूछिए , तो अम्मा के जाने के बाद , उस श्रीहीन स्नेहशून्य कोठी में घोषबाबू ही थे मेरे एक मात्र आत्मीय , सखा-सहचर , पथप्रदर्शक — सबकुछ । अम्मां की मृत्यु के तीसरे ही महीने में मैं बहुत बीमार पड़ गया । भयानक मलेरिया के विवश कंप में पीपल के पत्ते-सा थर-थर कांपता मैं एक दिन "जाड़ा-जाड़ा" चिल्ला रहा था , उधर घोषबाबू मेरे ऊपर घर-भर की रजाइयां-कम्बल डालते-डालते हांफने लगे थे , पर मेरा जाड़ा नहीं जा रहा था । सहसा

अपनी मेरूपर्वत-सी देह मुझ पर पड़ी रजाइयों के स्तूप पर डाल , वे न जाने कब तक "दुग्गा-दुग्गा" जपते रहे । जब तीव्र ज्वर के ताप से व्याकुल हो , मैंने रजाइयों के स्तूप को लात मारकर गिराया तो धड़ाम से घोषबाबू धराशायी हो गये । "मेरे फेलली रे खोका " ‖मार दिया रे खोका‖ कह वे शायद मुझे हंसाने की चेष्टा में ही दोनों हाथों से अपनी अनंत कटि की परिधि थाम , बंकिम मुद्रा में खड़े होकर कराहने लगे । मुझे हंसी आ गयी और उनका चेहरा खिल गया — " तुई हेसेछिस तो ए बार किच्छू होबे ना । " ‖ तूने हंस दिया अब कुछ अनिष्ट नहीं होगा ।‖ फिर वे मेरे तप्त ललाट को सहलाते स्वयं बड़बड़ाने लगे — " आहा रे छेले अमन असुखे भुगछे , आर उनी नौकाविहारे डाबुडुबुखाच्छेन " ‖आहा लड़का बुखार में पड़ा है और वे नौकाविहार में डूबे हैं । ‖ ... "कैसा जरूरी काम है , आमी सब जानी । " मेरे ललाट पर ठंडी पट्टी रखते घोषबाबू फिर अपनी स्वगतोक्ति में चालू हो जाते — " जत सब बाजेकथा, ओई मेनका के निये काजे ब्यस्त विश्वामित्र । " ‖सब झूठी बातें हैं । मेनका के साथ विश्वामित्र व्यस्त हैं । ‖ " [32]

"चौदह फेरे" की अहल्या वैसे तो बड़े बाप की बेटी है , परंतु चूंकि कर्नल ने उसकी मां नन्दी को छोड़ रखा था और उसकी परवरिश ‖शैशवकाल में ‖ उसके मामा के यहां अभावभरे वातावरण में हुई थी , जब नन्दी उसे लेकर कलकत्ता कर्नल के पास आती है तो अहल्या खाने की चीजों पर टूट पड़ती है । इस पर उसकी मां जब डांट देती है और कहती है कि अभी स्टेशन पर तो मामा ने खिलाया था , तब अहल्या उसके जवाब में जो कहती है वह एक छोटी अभावों में पली बच्ची के चरित्रांकन की दृष्टि से अत्यंत ही महत्वपूर्ण है , विशेषकर उसकी भाषा । लेखिका ने बिलकुल उस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है , जिस प्रकार की भाषा उसकी अवस्था के बच्चे बोल सकते हैं । देखिए :—

" हां फिर , मामा ने दालमोट ले दी थी , बिस्कुट भोड़ै थोड़े ही ना ले दिये थे , आहा , इनके बीच मीठा भरा हैगा । मुन्ना

चुन्ना और दीपा आयेंगे तो धुत्ता दूंगी सालों को । " अंगुलियां चाटती अहल्या , कल्पना के उस स्वर्ग के सिंहासन पर बैठी बिस्कुट खा रही थी, जहां उसकी मामी और उसके चुन्ना, मुन्ना , दीपा सतृष्ण दृष्टि से बिस्कुटों की उस भाग्यशाली राजकुमारी को ही देख रहे थे । ... उसने इसी आशा में द्रुतगामी स्पीड से बिस्कुट साफ किये थे कि वह आदमी मिठाई लायेगा । उसके हाथ में मिठाई नहीं देखी तो उसने अपने अधीर चित्त को मन-ही-मन आश्वासन दिया कि अब वह जेब से पुड़िया निकालेगा , पर जब वह कोरे ही हाथों लौट गया , तो उसने पुकारा ; " ऐ , आदमी , मिठाई क्यूं नहीं लाये -- बोलो , झूठ क्यों बोले , अब देखना भगवानजी तुमको गनेल {घोंघा} बना देंगे । " ... उस सर्वथा मौलिक शाप का दुरूह अर्थ न समझकर , परिहासरसिक बूढ़ा खड़ा हो गया : " गनेल क्या बिटिया ? " .... " हाय राम , कैसा आदमी है रे , गनेल भी नहीं जानता , देखो , सींग निकालकर ऐसे रेंगता है ," अहल्या जमीन पर दो अंगुलियां सिर पर उठाकर रेंग-रेंगकर बताने लगी थी कि दरवाजा खोलकर कर्नल आ गया । अहल्या सहमकर फिर मां के पास खिसक आयी और फुसफुसाकर बोली : " बाप रे बाप , अम्मा , फिर वही कनकट्टा आ गया , अबके जरूर कान काटेगा । " दोनों हाथों से कानों की सुरक्षा का उचित प्रबंध कर , वह मां के आंचल के नीचे दुबक गयी , महाराज भी चुपचाप खिसक गया । ... " देखता हूं , लड़की को भी अपनी ही तरह जंगली बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है , एक-दो दिन में ही स्कूल भेजना होगा । " " 33

उपर्युक्त परिच्छेद में हम देख सकते हैं कि भाषा के तीन स्तर मिलते हैं -- टिप्पणियों के रूप में स्वयं लेखिका की भाषा , बच्ची अहल्या की भाषा और कर्नल की भाषा । हालांकि कर्नल एक ही वाक्य बोले हैं , परंतु इतने मात्र से उसके रौबीले स्वभाव का परिचय मिल जाता है । अहल्या "सालों को " शब्द का प्रयोग करती है , वह जिन बच्चों के साथ वह पली है , उनकी संगत का असर है ।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि चरित्र-सृष्टि की प्रक्रिया में भाषा का एक साधन के रूप में प्रयोग होता है । चूंकि उपन्यास में बोलचाल की भाषा का प्रयोग वांछनीय समझा जाता है , अतः वही लेखक यहां अधिक सफल हो सकता है , जिसका अपने चरित्रों की भाषा से बड़ा करीबी रिश्ता हो । लेखिका ने अपने उपन्यासों में जिस प्रकार के चरित्रों को लिया है , वे विभिन्न क्षेत्र के और विभिन्न स्तर के हैं । सर्वत्र लेखिका ने अपने चरित्रों की परिवेशगत भाषा का ध्यान रखा है । इससे प्रतीत होता है कि शिवानीजी को जन-जीवन का गहरा अनुभव है । उनके अनुभवों का वैविध्य उनकी अनुभव-संपन्नता और अतएव जीवन-संपन्नता को द्योतित करता है ।

## 2.08 : विभिन्न व्यवसायों से संलग्न चरित्र और उनकी भाषा :

इसे स्वाभाविक ही समझा जायेगा कि चरित्र जिस व्यवसाय से संलग्नित होगा , उससे सम्बद्ध भाषा , उसके वार्तालाप में स्थान पायेगी ; क्योंकि मनुष्य हमेशा अपने परिवेश की भाषा को लेकर चलता है । कबीर का वह प्रसिद्ध पद इसका ज्वलन्त उदाहरण है , जिसमें कबीर ने जीवन के लिए "चदरिया" का रूपक लिया है । कबीर जुलाहे थे , अतः उस पद में उनके व्यवसाय से जुड़े हुए शब्द सहजतया स्थान पा जाते हैं । उसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति किसान होगा , कोई बढ़ई होगा , लुहार होगा , तांगेवाला होगा , वकील होगा , प्रोफेसर होगा , पंडित होगा , मौलवी होगा , डाक्टर होगा तो भाषा में उसके व्यवसाय की शब्दावली अवश्य प्राप्त होगी । अतः लेखक जब उपन्यास की रचना करता है , तब वह इस बात का अवश्य ध्यान रखता है कि चरित्र-सृष्टि में वह उन-उन चरित्रों के व्यवसाय से संलग्नित शब्दों का चयन करें । शिवानीजी भी एक सफल , अनुभव-संपन्न लेखिका हैं , अतः उनके विविध व्यावसायिक पात्रों में हम इस तथ्य को रेखांकित कर सकते हैं ।

"कालिन्दी" उपन्यास में कालिन्दी के नाना रूद्रदत्त भट्ट कुमाऊं के विख्यात ज्योतिषी थे । उनके मित्र पंडित मोतीराम पांडे भी प्रसिद्ध ज्योतिषी थे । रूद्रदत्त पांडे की पुत्री अन्नपूर्णा [अन्ना] की कुण्डली से ज्ञात होता है कि उनका जन्म सिंह-लग्न में हुआ था । ऐसे जातकों के भाग्य में पति-सुख नहीं होता । फलतः पंडितजी उन्हें उनकी ससुराल से बुला लेते हैं और फिर कभी भेजते नहीं हैं । पंडितजी अन्ना को भी ज्योतिष विद्या सीखाते हैं । अतः इस उपन्यास में इन पात्रों के मुख में जो भाषा रखी गई है , उसमें ज्योतिष-शास्त्र से संबंधित कई शब्द स्वयंमेव चले आये हैं , जैसे — ग्रह , नक्षत्र , सिंह-लग्न , कुण्डली , जातक , शालिवाहन , उत्तरायण , मासोत्तम मासे पौषमासे , शालिवाहन शके , दैवज्ञ , क्रूरे हीन बलेस्तगे स्वपतिना , सौम्येक्षिते प्रोज्झिता आदि आदि ।[34]

उसी प्रकार "कृष्णकली" उपन्यास में माणिक और पन्ना पुराने टाईप की तवायफें हैं । नाचना-गाना उनका पेशा है । वैसे उनका स्तर काफी ऊंचा है । पीली कोठी में सामान्य लोगों को प्रवेश नहीं है । बड़े-बड़े राजा-महाराजा , जमींदार , लाट साहब तथा उनसे जुड़े हुए बड़े आफिसर्स , मंत्री , राजदूत जैसी हस्तियों को ही वहां प्रवेश मिलता है । माणिक और पन्ना की मां मुनीर भी अपने समय की मानी हुई तवायफ थीं । माणिक नेपाल के राणा से हुई थी , तो पन्ना में विदेशी खून था । उसका पिता लाटसाहब का ए.डी.सी. था । अतः माणिक और पन्ना से सम्बद्ध जो विवरण मिलता है , उसमें उनके व्यवसाय से जुड़े हुए शब्दों का प्रयोग सहजतया हुआ है । एक उदाहरण द्रष्टव्य है —

"उधर माणिक अपने दलबल को लेकर अजमेर शरीफ़ के उर्स में चली गयी थी । जाने से दो दिन पूर्व दोनों बहनों में ठनक भी गयी थी । पन्ना के जयपुरी घराने के कत्थक नृत्य की प्रसिद्धि तब दूर-दूर तक थी । माणिक की मां के एक पुराने मित्र ने फ़रमाइश की थी कि उनके नवासे के मुण्डन में पन्ना अपना वही बहुचर्चित नृत्य प्रदर्शित करे —

" बालम मेरो भोलो रे
मैं किस पर करूं गुमान "

जिसे देखकर उन्होंने उसे बहुत पहले शुतुर्मुर्ग के अण्डों के से मोतियों की माला स्वयं पहना दी थी । .... पर पन्ना ने जीवन में पहली बार रौबदार बड़ी दी की आज्ञा का उल्लंघन कर दिया , " नहीं बड़ी दी , इस बार मैं कहीं नहीं नाच सकूंगी , तुम रोशन को भेज दो । " .... " क्या दिमाग खराब हो गया है तेरा ? जानती नहीं कि हमारी साल भर की रसद — दूध, दही , घी — कहां से आता है ? कितना मानते आये हैं रायकाका । आज उन्होंने एक सामान्य-सा अनुरोध किया और तू नहीं नाच सकेगी ? " [ इसीमें आगे पीली कोठी की वाणी सेन के सन्दर्भ में ]

" कृष्णकली आमी तारेई बोली —
कालो तारे बोले गायेर लोक
मेघला दिने , देखे छिलेम माठे
कालो मेयेर काली हरीण चोख । "

वाणी सेन के वंशी-से मीठे गले को किसी साज-संगत के बिना ही श्रोता को मोह लेने का वरदान प्राप्त था । स्वाभाविक मुरकियां , मीठे स्वर का सधा आरोह , जो कभी जादुई गति से अवरोह की सोपान पंक्तियों में सुनने वाले को भी बरबस अपने साथ खींच ले जाता ।" [35]

"कालिन्दी" उपन्यास की कालिन्दी डाक्टर है , अतः डाक्टर्स , अस्पताल , नर्स प्रभृति के परिवेश के कारण इस उपन्यास में डाक्टरी के व्यवसाय से जुड़े अनेक शब्द आये हैं , जैसे — इण्टर्नशिप , पिकअप , एनजाइना , संग्रहणी , मोर्चरी , प्रिमिटिव , इलेक्ट्रिक क्रिमेटोरियम , सिरोसिस , बैचमेट , गेट वेल सून , ऐंटी-एलर्जी , होमसिक-फील , बायपास सर्जरी , अब आसन्न-प्रसवा , डायाबिटिक , ब्लड-शुगर , बायोलोजिकल नेसेसिटी , वेजिटेरियन , पोलियोग्रस्त , स्पीलिंग-बैग आदि आदि ।[36] "श्मशान-चम्पा" उपन्यास की चम्पा भी डाक्टर है । अतः उस उपन्यास में भी ऐसे अनेकानेक शब्द आये हैं ।

इसके "कालिन्दी" उपन्यास के पिरीमामा कुमाऊं के एक पुरानी परिपाटी के वैद्य हैं । वे कुष्ठ-रोगियों का भी इलाज करते हैं । उन्होंने कभी काशी जाकर वैद्यकी-विद्या को पढ़ा था । जब कालिन्दी गांव अपने मामा-मामी तथा अम्मां से मिलने जाती है , तब इन्हीं पिरीमामा से से भी मिलती है । इस संदर्भ में जो विवरण आया है उसमें वैद्यकी से संलग्नित संलग्नित कई शब्द हैं तथा उनकी कतिपय मान्यताएं भी हैं जो इस वर्ग के व्यक्तियों में पाई जाती है । यथा --

""अरी तू तो ठहरी विलैती डाक्टरनी और हम निपट देहाती अनाड़ी वैद्य " वे उससे कहते पर दूर-दूर से उनके मरीज , उनसे दवा लेने आते थे , दवा लेने उन्हें कभी बाजार नहीं जाना पड़ता था । रीठा, हरड़ , पिपरमेंट , मुरेठी , आंवला , मूलाकंद , वासा , दारूहल्दी , गुल्म बनफ्शा , पाषाणभेद , जटामासी , रतनजोत , कर्णफूल जैसी बहुमूल्य जड़ी-बूटियों का उनके पास अशेष भण्डार था । तीन ही दिनों में उन्होंने कालिन्दी को कितने ही नुस्खे थमा दिए थे । एक दिन वह गोद में ही प्लेट रखकर नाश्ता करने लगी तो उन्होंने उसे डपट दिया, "कैसी डाक्टरनी है री तू , गोद में भक्ष्य पदार्थ रखकर खा रही है ?"? .... " यह हंसने की बात नहीं है भानजी -- यही तब तो हमें धरातक में धंसाये जा रहा है -- तब सुन चेहड़ी {लड़की} , गोद में रखकर , शय्या पर लेटकर कभी खाना नहीं चाहिए । यही नहीं मूर्ख , दुर्जन , पतित, शत्रु, वेश्या , धूर्त और वैश्य का अन्न भी ग्रहण नहीं करना चाहिए । " ... " नहीं चेली , मैंने आजतक अपनी ही औषधियों से कितने ही कुष्ठ-रोगियों को ठीक किया है , पुष्य नक्षत्र में , इन जंगलों से ही ढूंढ-ढूंढ कर बटोर लाता हूं । " .... "कैसी जड़ी-बूटियां हैं देते हैं मामा ?" वे हंसे -- "ऐसी मृत्युंजयी औषधियां जो तुम्हें ढूंढने पर भी तुम्हारी अंग्रेजी डाक्टरी-पोथी में नहीं मिलेंगी -- सुनेगी ? तब सुन -- लौह , तुरवक , मल्लातक , बाकुची , गुग्गुल और चित्रक । और फिर गाणीभद्र वटक योग का विधान । यानी रोगियों को एक-एक पक्ष पर वमन , एक-

एक महीने में विरेचन और तीन-तीन दिन पर शिरोविरेचन , फिर छः-छः महीने पर रक्तमोक्षण । " 37

अतः शिवानीजी के उपन्यासों का समग्रावलोकन करने पर हमें इस तथ्य का ज्ञान होता है कि साहित्य के अतिरिक्त कई विषयों का उन्हें ज्ञान है । उनको पढ़ते समय पाठक को भी विविध विषयों का , प्राच्य एवं प्राचीन विधाओं का ज्ञान मिलता रहता है । आनंद के साथ ज्ञान का मणि-कांचन योग शिवानी-साहित्य की अपनी विशेषता है और उनके उपन्यासों में हमें विभिन्न व्यवसायों से संयुक्त व्यक्तियों की भाषा के नाना रूप भी प्राप्त होते हैं ।

## 2.09 : भाषा — चरित्र के अन्तर्मन का आईना :

यदि कोई धोखा या षड्यन्त्र न हो तो भाषा से मनुष्य के अन्तर्मन का पता सहज रूप से लग जाता है । अगरचे कोई बनावट करे तो भी कभी-न-कभी सच्चाई तो उसके मुंह पर भाषा के रूप में आ ही जाती है । जैसे कहा गया है — " मैन इज़ नोन बाय द कम्पनी ही xxx कीप्स । " ठीक वैसे ही कहा जा सकता है — " मैन केन बी नोन बाय हीज़ स्पीच आल्सो । "

और यदि व्यापक रूप से सोचा जाय तो भाषा किसी जाति, वर्ग या समुदाय के चरित्र को भी उद्घाटित कर सकती है । हमारे देहात्मवादी चार्वाक भी कहते हैं — "ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत् " । "ऋणम् कृत्वा सुरां पिबेत् " नहीं कहते । हमारी संस्कृति घी-दूध-दही की संस्कृति है , शराब की संस्कृति नहीं । इसी प्रकार हमारी भाषा में कई ऐसी कहावतें हैं जिनमें स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखा गया है , जैसे — "ढोर गंवार शूद्र अरु नारी , ये सब ताडन के अधिकारी " या "स्त्री की बुद्धि पग की पानी में होती है " , या " दीकरी ने गाय दोरे त्यां जाय " [गुज. कहावत] तो इन कहावतों से हमारे देश के पुरुषसत्ताक

समाज का चरित्र प्रकट होता है । इस प्रकार भाषा का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन भी हो सकता है । यहाँ शिवानीजी के उपन्यासों से कतिपय उदा-हरणों को प्रस्तुत किया जा रहा है , जिनसे यह प्रमाणित होता है कि चरित्र की भाषा के द्वारा उसके अन्तर्मन पर प्रकाश डालने की महारत उन्हें भलीभांति सिद्ध है ।

"चौदह फेरे" उपन्यास का कर्नल एक संपन्न कुशल उद्योगपति है । उसका बैठना-उठना ऊंची सोसायटी में है । उसकी पत्नी नन्दी पहाड़ की एक गंवार औरत है । उसमें नगरीय सभ्य जीवन के तौर-तरीके नहीं है । एक बार नन्दी की पुत्री अहल्या बंगले के बाहर गंदे-सुगले कपड़ों में चली जाती है । इस बात को लेकर कर्नल नन्दी को डांटता है । "क्यों जी , तुमसे इतना भी नहीं होता कि लड़की को सड़क पर जाने से रोक सको ? अभी-अभी इतने कपड़े सिलवाकर दिये हैं , क्यों नहीं पहनाये ? " ... "पिन्हाये तो थे , लाल फिराक ही तो पहने थी लौंडिया ? " ... "और इसके नीचे तुमने जो हरी सलवार पहनाकर एकदम गार्ड की झण्डी बना दिया है उसे , गंवार ही नहीं जंगली हो एकदम , बीड़ी खरीद रही है छोकरी , मेरी इज्जत का तो ख्याल किया होता । " इस पर नन्दी पति का क्रोध अहल्या पर निकालते हुए उसे डांटती और पिटती है — " और जायेगी छोकरी ? ले-ले , मर जा , और ले-ले , तुझे माता निकले , तेरी ठठरी उठे । " [38]

यहां पर कर्नल की पत्नी नन्दी द्वारा जो भाषा प्रयुक्त हुई है , उससे पहाड़ी प्रदेश की अशिक्षित , गंवार , फूहड़ औरत का चरित्र प्रकट हुआ है । "पहनाने" को "पिन्हाना" , लड़की को "लौंडिया" और "चेचक" को "माता" कहना इत्यादि से यह बातें भलीभांति स्पष्ट हो जाती है । परंतु यह तो नन्दी का बाह्य-स्वरूप है , उसके भीतर की ममतामयी मां तथा उसके स्नेहालु हृदय का पता तो तब चलता है जब कर्नल उसे धोखे में रखकर ~~चुपचाप~~x चुपचाप उसे बोर्डिंग स्कूल में भेज देता है । कर्नल का ड्राईवर प्रभाकर जब अहल्या को गाड़ी में

बिठाकर ऊटी के लिए छोड़ने जाता है, तब अहल्या और नन्दी को इस बात का पता भी न था कि अहल्या को कलकत्ते से बाहर भेजा जा रहा है। अतः नन्दी प्रभाकर से कहती है — "अबेर मत करियो प्रभाकर, ठण्ड हैगी।" [39] परंतु जब देर रात तक प्रभाकर नहीं आता तब नन्दी को चिन्ता होती है। बड़ी देर बाद जब वह आता है, तब नन्दी उससे पूछती है — "बिटिया कहां है प्रभाकर ? बड़ी देर कर दी।" [40] तब प्रभाकर कहता है — "मांजी, बिटिया तो मद्रास गयी साहब के साथ, वहीं स्कूल में पढ़ेगी।" [41] नन्दी की प्रतिवेशिनी शांति जब उसे ढाढस बंधाती है कि "दीदी, छुट्टी में तो घर आयेगी, धीरज रखिये, भगवान सबकी सुनता है।" [42] तब नन्दी बिलखकर कहती है — "मेरी कब सुनी हैगी भगवान ने, हाय मरी, बिलबिला रही होगी।" [43] यहां पर नन्दी के मुंह में जो भाषा लेखिका ने रखी है, उसमें उसके मन की अन्तर्वेदना प्रत्यक्ष हुई है।

"कृष्णकली" उपन्यास का दामोदर पुलिस विभाग में अफसर था, परन्तु अपने भ्रष्ट आचरण के कारण उसे निलम्बित कर दिया गया था। वह बड़ा ही ढीढ, मुंहफट, लोलुप, चटोरिया और निर्लज्ज प्रकार का व्यक्ति था। प्रवीर की सगाई के बाद का एक प्रसंग है, उसमें वह अपनी सास तथा साले प्रवीर से जिस प्रकार की बात करता है, उससे उसके चरित्र की उक्त विशेषताओं या दुर्गुणों पर काफी प्रकाश पड़ता है। उसकी भाषा ही उसके चरित्र का आईना बन आई है। यथा —

" "क्यों अम्मा" दामोदर न जाने कहां से आकर फिर द्वार पर खड़ा हो गया, " क्या समधियाने की मिठाई का अचार डालोगी ? खिलाओ ना एक-आध बालूशाही। हमें तो भाई अपने घर में खाने के बाद मिष्टदन्त का अभ्यास है।" .... एक बालूशाही उसने प्रवीर की ओर बढ़ा दी और हंसकर कहने लगा, " लो चखो प्यारे, ससुराल की मिठाई और भी मीठी लगती है।" ..... " सोच रहा हूं प्यारे, आज तुम्हारी ससुराल तक घूम आयें। कल चलने लगे तो

तुम्हारे ससुरजी ने बड़ा प्रेमभरा निमन्त्रण दिया था । " दामोदर ने बालूशाही से चिपचिपे ओठों पर तृप्त जिह्वा फेरी और कुर्सी प्रवीर की ओर खींच ली । " आई से , एक दस का नोट दे सकोगे क्या ? हमारा प्रिवी पर्स आज कल तुम्हारी राजरानी बहन के पास रहता है और आज उनसे कुछ मिलने की आशा व्यर्थ है । " ..... " क्यों प्रवीर किस सोचमें पड़ गये । बड़े आदमी हो , दस का नोट तो तुम्हारे कोट की सींवन में पड़ा होगा । " { प्रवीर ने दस का नोट उसकी तरफ फेंकते हुए कहा था । } " देखो दामोदर , पाण्डेजी के यहां तुम्हारा जाना ठीक नहीं है । " .... " ओह अच्छा । तुम्हारा जाना तो ठीक है ना ? " वह हंसकर कहने लगा , " मैंने सुना है , तुम्हें कल फिर चाय पर बुलाया है । शायद तुमने नहीं सुना । मैंने कहा था ना , हजार हो , आखिर पुलिस महकमे का अफसर हूं — उड़ती चिड़िया तो हमारा थानेदार ही पहचान लेता है । अभी उन्हीं का फोन आया था । हमने सुन लिया । तुम तो साले बहरे हो । कोई मन्त्रीजी आ रहे हैं — पाण्डेजी तुम्हारी बदली के लिए उन्हीं की धरपकड़ कर रहे हैं । इसी से तो हम भी जा रहे थे कि बहती गंगा में हम भी हाथ धो लें , पर तुमने टोक दिया । दामोदर को किसीने चलते-चलते टोक दिया , तो फिर वह वहां भूलकर भी नहीं जाता , समझे । ? " "[44]

अभिप्राय यह कि शिवानीजी का भाषा पर पूर्णतया काबू है और कौन-से पात्र के द्वारा कैसे और किस तरह कैसी भाषा बुलवानी है , वह इससे बखूबी जानती हैं । ऐसी पारदर्शक भाषा का प्रयोग वह करती हैं कि चरित्र की तमाम-तमाम आंतरिक विशेषताएं उसकी जुबान पर आ जाती हैं ।

## 2.10 : निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्याय के समग्रावलोकन पर हम निम्नलिखित निष्कर्षों

तक पहुंच सकते हैं :—

§1§ पात्र के निर्माण में उसका बाहरी आपा, भीतरी आपा, उसका तकिया-कलाम, परिवेश, शिक्षा-संस्कार, व्यवसाय, लिंग प्रभृति अनेक आयामों को लक्षित किया जाता है और इन सबको यथार्थ रूप में सृष्ट करने में भाषा की एक महती भूमिका होती है।

§2§ विषय-वस्तु एवं भाषा का संबंध भी अटूट होता है। शिवानी ने अपने उपन्यासों में विषय-वस्तु के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है।

§3§ समसामयिक विषय-वस्तु की प्रस्तुति में शिवानी को गजब की महारत हासिल है।

§4§ ऐतिहासिक एवं पौराणिक सन्दर्भों में लेखिका ने उस परिवेश के निर्माण हेतु विषयानुरूप भाषा का प्रयोग किया है। इस संदर्भ में शिवानीजी की भाषा आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, जयशंकर-प्रसाद तथा भगवतीशरण मिश्र से तुलनीय है।

§5§ शिवानी में नगरीय एवं ग्रामीण कथावस्तु के हिसाब से भी भाषागत अंतर लक्षित होता है।

§6§ चरित्र-सृष्टि में भाषागत नैपुण्य अपरिहार्य है। शिवानीजी की यही तो विशेषता है कि उनकी कथा-सृष्टि में चरित्र-वैविध्य के साथ-साथ भाषागत वैविध्य पाठकों का ध्यान आकर्षित करता है।

§7§ चरित्रों के नाना स्तर तथा व्यवसाय के अनुरूप भाषा का प्रयोग करने में शिवानीजी को सफलता प्राप्त हुई है। और इस सन्दर्भ में हम अनुभव करते हैं शिवानीजी की भाषा चरित्र के अन्तर्मन का आईना बन जाती है।

===== XXXXX =====

:: सन्दर्भानुक्रम ::


(1) कृष्णकली : पृ. 19 ।

(2) भैरवी : पृ. 115-121 ।

(3) चौदह फेरे : पृ. 23-24 ।

(4) श्मशानचम्पा : पृ. 76-77 ।

(5) वही : पृ. 119-120 ।

(6) कृष्णकली : पृ. 127 ।

(7) तर्पण : पृ. 55 ।

(8) विषकन्या : पृ. 33-34 ।

(9) श्मशानचम्पा : पृ. 131 ।

(10) कृष्णकली : पृ. 20-21 ।

(11) माणिक : पृ. 15-16 ।

(12) कालिन्दी : पृ. 15-16 ।

(13) चौदह फेरे : पृ. 26 ।

(14) कृष्णकली : पृ. 140-141 ।

(15) माणिक : पृ. 15 ।

(16) कैंजा : पृ. 26- 31 ।

(17) चौदह फेरे : पृ. 10 ।

(18) वही : पृ. 55 ।

(19) वही : पृ. 55 ।

(20) वही : पृ. 56 ।

(21) श्मशानचम्पा : पृ. 117-118 ।

(22) कृष्णकली : पृ. 143 ।

(23) चौदह फेरे : पृ. 19 ।

(24) भैरवी : पृ. 127 ।

(25) मायापुरी : पृ. 15-16 ।

(26) वही : पृ. 17-18 ।

(27) कृष्णकली : पृ. 80 ।

§28§ कृष्णकली : पृ. 159-160 ।

§29§ गैण्डा : पृ. 29-30 ।

§30§ वही : पृ. 31 ।

§31§ भैरवी : पृ. 114-115-116 ।

§32§ कस्तूरी मृग : पृ. 12-13-14 ।

§33§ चौदह फेरे : पृ. 14-15 ।

§34§ कालिन्दी : पृ. 15-16 ।

§35§ कृष्णकली : पृ. 22-29 ।

§36§ कालिन्दी : पृ. क्रमशः : 22, 24, 27, 56, 64, 64, 64, 76, 98,
104, 104, 117, 116, 121, 126, 126, 135, 175, 888 203 ।

§37§ कालिन्दी : पृ. 199-201 ।

§38§ चौदह फेरे : पृ. 18 ।

§39§ वही : पृ. 18 ।

§40§ से §43§ : वही : पृ. क्रमशः 18, 18, 19, 19 ।

§44§ कृष्णकली : पृ. 169-170-171 ।

====== xxxxxx =======